

अनौपचारिका

समकालीन शिक्षा-चिन्तन की मासिक पत्रिका

वर्ष : ४५ अंक : २ माघ–फाल्गुन वि.सं.– २०७५ **फरवरी,** २०१९ पृष्ठ –२८ एक प्रति अठारह रुपए RNI 43602/77





महिलाओं के साथ साक्षरता संवाद

अभी हाल ही में राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति नें प्रयोग की दृष्टि से एक नया काम शुरू किया है। इसके मुख्य लक्ष्य हैं– ग्रामीण महिला समूहों का जागरण एवं स्वावलम्बन की दिशा में इनका अभिमुखीकरण। दूसरा लक्ष्य है उनकी समाजोन्मुखी सतत शिक्षा एवं उत्तर साक्षरता। तीसरा लक्ष्य है समिति में उपलब्ध प्रकाशित सामग्री की उपयोगिता की पुष्टि और उसका शिक्षण में उपयोग। चौथा लक्ष्य है नई शिक्षा सामग्री का सृजन एवं प्रकाशन। इसी दृष्टि से जे.सी.बी. लेडी बैम्फोर्ड चेरीटेबल ट्रस्ट द्वारा चलाए जा रहे स्वयं सहायता समूह की महिलाओं के साथ ग्राम पंचायत भम्भोरिया में एक दिवसीय साक्षरता संवाद आयोजित किया गया। ट्रस्ट की ओर से हेमलता व शयामसुन्दर हमारे साथ थे। हेमलता ने ट्रस्ट के कार्यो के संबंध में जानकारी देते हुए बताया कि गांव में महिलाओं के साथ जागरूकता संबंधी कार्य करते हुए यह अनुभव किया गया कि महिलाओं को संगठित करके ही उनकी समस्याओं के समाधान किए जा सकते हैं। इसके लिए सर्वप्रथम समूह निर्माण का कार्य प्रारंभ किया। इन समूहों के माध्यम से उन्हें आर्थिक रूप से सशक्त करने का कार्य भी किया। ये समूह स्वयं सहायता समूह के रूप में बनाए गए। वर्तमान में ३५ समूह गठित किये गये हैं। जिनमें लगभग ५०० महिलाएं जुड़ी हुई हैं।

गांवों में असाक्षर व अर्द्धसाक्षर ग्रामीण महिलाओं की साक्षरता का कार्य प्रारंभ करने के लिए समिति के सहयोग से ट्रस्ट प्रयासरत है। इसी उद्देश्य से स्वयं सहायता समूह की महिलाओं के साथ ११ जनवरी, २०१६ को साक्षरता संवाद का आयोजन किया गया था। संवाद सहज हो इसके लिए जरूरी था कि पहले हम सभी एक दूसरे को जान लें। पहचान लें। सबके साथ परिचय किया गया। परिचय को रोचक बनाने के लिये यह विधा अपनायी गई कि महिलाएं पुराने अखबार से हवाई जहाज बनाएं और उसे उडाएं। हवाई जहाज जिस महिला के पास जाएगा वे दोनों महिलाएं एक–दूसरे का परिचय देंगी। यह सुनते ही सब महिलाएं उत्साहित हो गईं। याद करने लगीं कि बचपन में कागज से हवाई जहाज कैसे बनाते थे? कुछ ने कोशिश भी की। प्रयास सफल रहा और हवाई जहाज बन गए। इस तरह से दो–दो के समूह में सबका परिचय हुआ। अच्छी बात यह थी कि हर महिला ने अपनी बात खुलकर कही। परिचय में नाम, आयु, शिक्षा, परिवार का व्यवसाय, परिवार में शिक्षित सदस्य एवं रुचिकर कार्यों के बारे में बताया। हांलाकि अधिकांश महिलाएं एक–दूसरे से परिचित थीं किन्तु परिचय की प्रक्रिया मनोरंजक होने के कारण सभी एक–दूसरे के बारे में जानने को उत्सुक थीं। इस संवाद में चार गांवों की ४६ महिलाओं ने भाग लिया। ये चार गांव हैं– भम्भोरिया, बगरू खुर्द, देवलिया व झाई। परिचय के बाद मंगलगान हुआ। हमने भी सभी महिलाओं के साथ **तुम मुझको विश्वास दो, मै तुमको विश्वास दूं तथा ले मशालें चल पड़े हैं लोग मेरे गांव के** गीत गाये।

राजस्थान प्रौढ़ समिति द्वारा किए जा रहे कार्यों के बारे में महिलाओं को जानकारी दी गई। राज्य में समिति साक्षरता प्रशिक्षण और प्रकाशन के क्षेत्र में वर्षों से महत्वपूर्ण कार्य कर रही है। जो लोग किन्हीं कारणों से पढ़ने से वंचित रह गए या पढ़ाई बीच में छूट जाने के कारण अर्द्धशिक्षित हैं उनके पठन–पाठन के लिए निर्धारित मापदण्डों के अनुरूप प्रवेशिका निर्माण किया जाता है। जिसमें शब्द, भाषा, चित्र, क्षेत्र एवं परिवेश आदि को ध्यान में रखते हुए बनाया जाता है। जिससे पढ़ना आसान लगने लगता है। कम अवधि में शीघ्र सीख सकते हैं। प्रवेशिका के माध्यम से २०० घंटों का शिक्षण छह माह की अवधि में किया जाता है। यह शिक्षण यदि नियमित होता है तो और भी कम अवधि में भी सम्पूर्ण साक्षर हो सकते हैं, ऐसा शोध अध्ययन द्वारा जांचा भी गया है। प्रवेशिका के माध्यम से कैसे पढ़ाना है, जिससे कि प्रौढ़ जल्दी सीख सकें।

समिति द्वारा प्रकाशित नवसाक्षर साहित्य भी महिलाओं के समक्ष प्रदर्शित किया गया। महिलाओं को गोल

शेष आवरण पृष्ठ–२७ पर...



वाणी

॥ कबीर ॥

घायल की गति और है, औरन की गति और ।
प्रेम बान हिरदे लगा, रहा कबीरा ठौर ॥

समानो मन्त्र: समिति: समानी
समानं मन: सहचित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये व:
समानेन वो हविषा जुहोमि।।

समानी व आकूति:
समाना हृदयानि व:।
समानमस्तु वो मनो
यथा व: सुसहासति।। – ऋग्वेद

अनौपचारिका

समकालीन शिक्षा–चिन्तन की पत्रिका

वर्ष : ४५ अंक : २
फरवरी, २०१९
माघ–फाल्गुन वि.सं.–२०७५



संस्थापक संपादक एवं संरक्षक
रमेश थानवी



कार्यकारी संपादक
प्रेम गुप्ता



प्रबंध संपादक
दिलीप शर्मा



- एक प्रति अठारह रुपये
- वार्षिक व्यक्तिगत एवं संस्थागत सहयोग राशि दो सौ रुपये
- मैत्री समुदाय की सहयोग राशि दो हजार रुपये



राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति
७–ए, झालाना डूंगरी संस्थान क्षेत्र
जयपुर–३०२ ००४
फोन- २७००५५९, २७०६७०९, २७०७६७७
ई मेल – raeajaipur@gmail.com



आवरण चित्र – एस.आर. गौहरी दिल्ली

क्रम

विज्ञान और जीवन का यह कैसा गठबंधन!

मित्रो,

पिछले अंक में हमने नयी आशा और नये विश्वास के साथ चलते हुए '**विश्वजनीन भाईचारे**' को अपनाने की बात की थी। इस माह की खास बात यह है कि यह महीना बसन्त के आगमन के आमंत्रण का महीना है।

अगर हम प्रकृति की बात करें तो प्रकृति स्वयं एक बड़ी सृजनकर्ता है। रचनाकार है। यह हमें सौन्दर्य से, मधुरता से और प्रेम से सराबोर रखती है। प्रकृति में हर पल नयेपन का सृजन होता है। पुराने की जगह नया धारण करना ही इसका नियम है। यह एक वैज्ञानिक सच है। बसंत न केवल हमारे जीवन को प्रेम से, फूलों से, नव कोंपलों से जीवन में सुगन्ध भरता है, हमें नया करने के लिए प्रेरित करता है।

हम सभी जानते हैं कि हमारे मन का, स्वास्थ्य का, इस प्रकृति से कितना गहरा सम्बन्ध है ? कितना आत्मीय रिश्ता है हमारा और प्रकृति का। ऐसे में हम विज्ञान की बात करें तो विज्ञान ने हमारे जीवन को किसी भी तरह से अछूता नहीं छोड़ा है। मेरे ख्याल से हमारे भारतीय वैज्ञानिकों ने जितनी भी खोजें की होंगी, वह निश्चित रूप से 'आत्मनिर्भरता' के उद्देश्य से की होंगी। इतना ही नहीं प्रत्येक व्यक्ति को सुख-सुविधा और सम्मान का जीवन देने के लिए कीं न कि 'विध्वंस' फैलाने और डराने के लिए। विज्ञान का सही प्रयोग दुनिया की भलाई के लिए है, मानवता के लिए है, विकास के लिए है। कष्ट और दर्द से भरा जीवन प्रदान करने के लिए नहीं है।

आज विज्ञान के प्रयोग ने तो हमारी सारी दुनिया को ही बदल कर रख दिया है। यहां तक कि विज्ञान ने हमारे जीवन को ही '**रोबोट**' बना दिया है हमारा सारा जीवन मशीन बनकर रह गया है। **आर्टिफिशियेल इंटेलीजेंस (ए.ई.)** का जमाना आ गया है। जिसके चलते मानवीय संवेदना दिनों दिन कम होती जा रही है। पिछले दिनों ऐसा ही कुछ अनुभव हुआ। मैंने करीब से देखा कि किस प्रकार चिकित्सक हमारे शरीर को प्रयोगशाला समझते हैं। प्रयोगशाला की तरह चिकित्सकीय प्रयोग करते हैं। दवाइयों के ऐसे-ऐसे प्रयोग किये जाते हैं कि एक रोग से छुटकारा पाने के बजाय दूसरा रोग मुफ्त में प्रसाद स्वरूप मिल जाता है। हमारे पूर्वज ध्यान और धारणा,

संकल्पों से अपने को स्वस्थ रखा करते थे, वहीं हम छोटे-छोटे रोगों के लिए विज्ञान पर निर्भर हो गये हैं। विज्ञान के नये- नये आविष्कारों ने हमें कहीं का नहीं छोड़ा है। हम अपने ही शरीर को समझ नहीं पा रहे हैं। भूल हमसे ही हुई है, हमने प्रकृति से अपने रिश्ते को स्वयं ही तोड़ दिया है। बाजारी आकर्षण के चंगुल में आकर तो हमने अपने घर के खिड़की, दरवाजों को भी बंद कर दिया है। क्या मजाल है कि किसी झरोखे से खुली हवा हमारे दिमाग में प्रवेश कर जाये ? जहां प्रकृति हमारे जीने का सहारा थी। हमें स्वस्थ रखने में हर पल हमारे साथ होती थी। वहीं विकास के नाम पर ऐसी होड़ लगी है कि हम नयी से नयी तकनीक काम में लेने को अपने ऊंचे जीवन स्तर का सिम्बल मान चुके हैं।

मेरी पीड़ा यह नहीं है कि इन साधनों का उपयोग न किया जाए, बल्कि मैं ऐसा इसलिए कह रही हूं कि बिना सोचे समझे, बिना सूझबूझ और विवेक को काम में लिए हम सब एक बहुत बड़े खतरे में पड़ सकते हैं। मेरी चिन्ता यह भी है कि आज '**अपना**' या '**निजी**' कहने को भी कुछ नहीं बचा है। हम कभी भी, किसी भी समय 'ठगी' का शिकार हो सकते हैं।

महान् दार्शनिक एवं शिक्षाविद् **महात्मा भगवानदीन** ने अपनी पुस्तक 'बालक अपनी प्रयोगशाला में' चिन्ता जताते हुए कहा है कि 'लड़के-लड़कियों' को इतना सूझबूझ वाला होना होगा, इतना मिलनसार बनना पड़ेगा कि 'विज्ञान' हमारे ऊपर हावी न हो जाए। 'इवान इलिच' के शब्दों में तो **समझ का विकास** ही असली व सच्चा विकास है।

मेरा यह मानना है कि केवल उच्च शिक्षा या डिग्रियां ही जीवन जीना नहीं सिखाती हैं, बल्कि प्रकृति भी दिन ब दिन जिन्दगी के नये मायने हमारे सामने खड़े करती है। वह हमारे अंतर्मन में प्रेरणा स्रोत बनी रहती है। प्रकृति के सानिध्य में मैंने कई बार महसूस किया है कि हमारा मन कैसे शांत हो जाता हैं, जहां अस्वस्थता तो गायब ही हो जाती है। यहां तक कि प्रकृति से नजदीकी रखने वाले प्राणी मात्र में भी '**हिंसा**' नहीं के बराबर देखने को मिलती है। ऐसे प्राणियों में प्रेम और करुणा सराबोर हुए रहते हैं।

आइए, वसंत के इस अवसर पर प्रकृति के '**अपनेपन**' के भाव को अपनाएं। प्रकृति के जर्रे-जर्रे के प्रति ऐसी ही श्रद्धा और आस्था हम अपने बालकों के मन में भर दें ताकि बालक प्रकृति के सौन्दर्य का आनन्द ले सकें। ऐसे में मुझे एक उम्मीद दिखाई देती है वह है कि हम प्राथमिक स्तर पर बालकों को **प्रकृति की पाठशाला** में रहना और जीना सिखाएं। तभी हम एक सृजनशील एवं रचनात्मक समाज के निर्माण में भागीदारी निभा सकेंगे। ❑ -प्रेम गुप्ता





बापू का जीवन : एक चिंतन



सर्वपल्ली डॉ. राधाकृष्णन

सत्य ही ईश्वर है यह एक ऐसी आंतरिक सत्यशोधन की लम्बी व गहरी यात्रा है जिस पर चलकर गांधीजी ने स्वयं के जीवन की कसौटी पर उतारा और आज यह एक वैश्विक संदेश बन गया है। जाने-माने शिक्षाविद् डॉ. राधाकृष्णन की बापू के साथ हुई बातचीत के दौरान जो सवाल उन्होंने बापू से किये थे। उनका जवाब गांधीजी ने अपने अनुभव के आधार पर दिया। महान् राष्ट्रीय नेता बनने तक के सफर में बापू को जो अहसास हुआ, जो प्रतीति उन्हें अहिंसा के संबंध में हुई प्रस्तुत आलेख को पढ़कर पाठक उस पर चिन्तन मनन कर सकेंगे। ❑ सं.

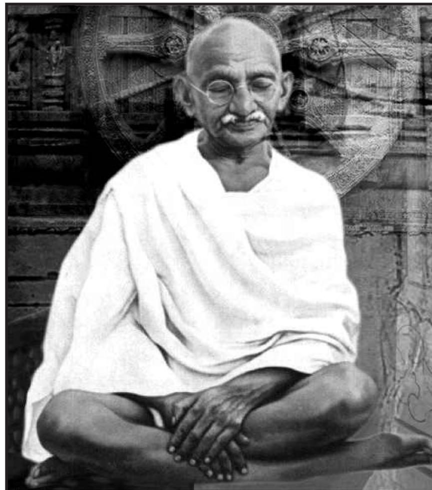
लंदन टाइम्स अखबार ने लिखा है- 'भारत के अलावा दूसरा कोई देश नहीं है और हिन्दू धर्म के अलावा दूसरा कोई धर्म नहीं है जो गांधी जैसी शख्सियत को पैदा कर सके।' यही कारण है कि मैं कह रहा हूं कि वे कुछ खास अर्थों में हमारे थे।

अनेक तरीकों से उन्होंने इस देश की और दुनिया की सेवा की। वे महान राष्ट्रीय नेता थे। वे गुलामों के मुक्तिदाता थे। उन्होंने हमें प्यार की उस सक्रिय ताकत का रहस्य बतलाया, जो कभी विफल नहीं होती है। वे असाधारण नैतिक पुरुष थे जिसने दूसरों पर किसी प्रकार का प्रभाव डालने से पहले खुद को ही उस कसौटी पर चढ़ाया। तरह-तरह के रास्तों से उन्होंने हमें अच्छा बनने में मदद की।

याद करता हूं तो यह कोई तीस साल पहले की बात है जब मैंने गांधीजी से तीन सवाल पूछे थे- पहला था कि आपका धर्म क्या है, दूसरा था कि आप कैसे इस धर्म तक पहुंचे? और तीसरा था कि इसका आपके जीवन पर क्या परिणाम हुआ? उन्होंने थोड़े में इस तरह जवाब दिया- 'पहले मैं कहा करता था कि 'मैं भगवान में विश्वास करता हूं', अब कहता हूं कि 'मैं सत्य में विश्वास करता हूं'। पहले मैं कहा करता था कि 'ईश्वर सत्य है', और आज मैं कहता हूं कि 'सत्य ही ईश्वर है।' ऐसे लोग हैं कि जो ईश्वर को नहीं मानते हैं लेकिन ऐसा कोई इंसान नहीं होगा जो सत्य को नहीं मानता है। यह ऐसी बात है कि जिसे एक निरीश्वरवादी भी कबूल करता है।'

जब वे हमसे ऐसा कहते हैं तब वे कोई नया सिद्धांत उद्घाटित नहीं कर

रहे होते हैं। वे सिर्फ उस बुनियादी सत्यों की घोषणा करते हैं, जो हमें उस सांस्कृतिक विरासत से मिले हैं जिसमें हम रहते हैं, जिसमें गांधी का पोषण हुआ। उन्होंने अपने जीवन में दो बातें रखीं– सत्यम् वद्, धर्मम चर् ! मतलब कि सच बोलो और सच्चा काम करो। सत्य वचन और सही काम ! वे इसे ही सत्य और अहिंसा कहते थे। कुल यही पूंजी थी उनके पास। सत्य ऐसी कोई चीज़ नहीं है कि जिसे आप यूं ही कहीं से पा लें या उठा लें। यह मांग करता है कि हम आंतरिक सत्यशोधन की दिशा में गहरी व लम्बी यात्रा करें। ऐसी यात्रा, जहां पहुंच कर आंतरिक व ब्राह्य जगत के बीच एक संतुलन या सुसंवादिता बनती है। सत्यम ! वाक् (शब्द) और मनस (विचार) की कोई पहचान या उसका कोई स्वरूप तो होगा ही। अगर उस पहचान को हम प्राप्त कर सकें तो वही है जिसे सत्य कहते हैं। यह वह सत्य है जो हमें इसे विकृत करने की छूट नहीं देता है, अतिश्योक्ति की इजाज़त नहीं देता है। यह हमें झूठ बोलने से रोकता भर नहीं है बल्कि यह हमें वह सब कहने की इजाज़त ही नहीं देता है जिसके बारे में हमारे मन में संशय है। इसलिए यह वह सत्य है जिसे प्राप्त करने के लिए हमें खासी कीमत अदा करनी पड़ती है। हमने चाहा और यह हमें मिल गया, ऐसा नहीं होता है। इसलिए वे कहते हैं, 'मैं खुद ही एक संघर्ष से गुजर रहा हूं। मेरे भीतर एक द्वंद्व है उस परम सत्य और जो सामने की परिस्थिति है उसके बीच! इन दोनों का एक-दूसरे से मेल बैठता नहीं है। मैं इन दोनों के बीच में संतुलन या सुसंवादिता कि स्थिति



यह वह सत्य है जो हमें इसे विकृत करने की छूट नहीं देता है, अतिश्योक्ति की इजाज़त नहीं देता है। यह हमें झूठ बोलने से रोकता भर नहीं है बल्कि यह हमें वह सब कहने की इजाज़त ही नहीं देता है जिसके बारे में हमारे मन में संशय है। इसलिए यह वह सत्य है जिसे प्राप्त करने के लिए हमें खासी कीमत अदा करनी पड़ती है। हमने चाहा और यह हमें मिल गया, ऐसा नहीं होता है।

बनाना चाहता हूं तो मुझे प्रायश्चित करना पड़ता है, अपनी सारी बनी-बनायी अवधारणाओं से मुक्त होना पड़ता है और उस परम सत्ता से, जो हमेशा यहां मौजूद है, एकाकार होने की कोशिश करनी पड़ती है।'

फिर गांधी हमसे कहते हैं कि अहिंसा सत्य का सक्रिय स्वरूप है। इसका मतलब यह हुआ कि यदि हम अपने रोज़मर्रा के कामों से सत्य को जोड़ना चाहते हैं तो हमें अहिंसा-धर्म का पालक बनना होगा। अहिंसा हमसे यह नहीं कहती है कि हमें कभी भी ताकत का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए। वह तो इतना ही कहती है कि हमारी आत्मा हमेशा पवित्र रहनी चाहिए। योग-सूत्र कहता है- अहिंसा प्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ वैरत्याग:! जहां अहिंसा है वहां तो वैर या घृणा हो ही नहीं सकती है। इसलिए कहा-''वैरत्याग:! संसार के किसी भी प्राणी के लिए मन में बुरा भाव हो ही नहीं, वे हमसे यहां तक उठने की अपेक्षा करते हैं। हमें अपने आंतरिक मनोभावों पर काबू रखना है, अपनी चाहतों पर काबू करना है, किसी मनुष्य के लिए कोई विकार-भाव हो ही नहीं। इतना ही नहीं, धरती के प्राणीमात्र के लिए हमारा भाव ऐसा ही हो। ऐसी बातें दूसरे धर्मों ने भी कही हैं, दूसरे विचारकों ने भी कही हैं। कांट ने कहा है- 'अपने भीतर सारी मानवता को स्वीकार करो और सारी मानवता में खुद को देखो, और इसे ही अंतिम पूर्णता समझो, न कि किसी बाह्य साधन की बात सोचो!' स्वाइत्जर कहते हैं, 'जीवन की आराधना ही वह साधना है, जो हम सबको साधनी है।' ये सब एक ही परम सत्य को व्यक्त करने की विभिन्न कोशिशें हैं- वह सत्य जिसे हमने अनगिनत बार दोहराया है लेकिन अपने रोज के जीवन में हम जिसका पालन नहीं कर पाते हैं। गांधी जब अहिंसा की बात करते हैं तो उससे उनका मतलब यह होता है कि हमें बुराइयों को जीतना है। बुराइयों को प्यार की ताकत से

निष्प्रभावी बनाना है। यदि हम ऐसा नहीं कर सकते हैं तो फिर ताकत से उसका मुकाबला करें। यही है जो महाभारत कहता है –'शास्त्रादपि शस्त्रादपि!' बुराई का मुकाबला तो करना है– अपने देश की परम्पराओं की ताकत से करें हम या फिर हथियारों से करें। गांधी ने स्वयं भी कहा कि ये दोनों रास्ते सम्मानजनक रास्ते हैं। हमें अपनी अंतिम हद तक जाकर अहिंसा का प्रयोग करना चाहिए। लेकिन अगर हम इस रास्ते बुराई का अंत नहीं कर पाते हैं, उसे समाप्त नहीं कर पाते हैं तो हमें संसार को घृणा और भय के सागर में डूब मरने को छोड़ नहीं देना चाहिए। हमें घृणा के इस भाव से मुक्ति पानी ही है।

घृणा एक ऐसी शक्ति है जो हमारा चिंतन विचलित कर देती है, यह हमारी अंतरात्मा को किसी वाद–विशेष का गुलाम बना देती है। हम अपने भले का रास्ता भी सीधे से देख नहीं पाते हैं। इसलिए हर प्रकार के घृणा–भाव से खुद को मुक्त करना जरूरी हो जाता है। जब तक हम ऐसा नहीं करते हैं तब तक हम अहिंसा के सच्चे आराधक नहीं बन सकते हैं। तो बात सिर्फ शक्ति के प्रयोग से इनकार करने की नहीं है, बात तो घृणा से, दुष्ट विचारों से मुक्ति पाने की है। कमोबेश यही है जिसे हमारी परम्परा से निकालकर उन्होंने हमें समझाया। यही बात हमें भगवद् गीता में भी मिलती है। जब अर्जुन महाभारत के रण में खड़े होकर युद्ध से विरत होने की बात करता है, जब वह उस रणभूमि से निकल जाना चाहता है, तब कृष्ण उससे कह रहे हैं कि 'क्षुद्रम हृदय दौर्बल्यं त्यक्तवा उत्तिष्ठा



घृणा एक ऐसी शक्ति है जो हमारा चिंतन विचलित कर देती है, यह हमारी अंतरात्मा को किसी वाद–विशेष का गुलाम बना देती है। हम अपने भले का रास्ता भी सीधे से देख नहीं पाते हैं। इसलिए हर प्रकार के घृणा–भाव से खुद को मुक्त करना जरूरी हो जाता है। जब तक हम ऐसा नहीं करते हैं तब तक हम अहिंसा के सच्चे आराधक नहीं बन सकते हैं।

परंतप' कि हृदय की यह दुर्बलता तुम्हें शोभा नहीं देती है, यह तुम्हारे योग्य नहीं है अर्जुन !

गांधीजी भी धीरे–धीरे हिंसा को बर्दाश्त करने से आगे निकलकर घृणा के पूर्ण शमन की तरफ जा रहे थे, लेकिन जब उन्होंने देखा कि दुनिया में ऐसे भयंकर हथियार बन रहे हैं, आण्विक हथियार, जो हमारे पास दूसरा कोई विकल्प छोड़ते ही नहीं हैं कि या तो सम्पूर्ण विनाश हो या फिर पूरा संरक्षण हो, तब कहा उन्होंने कि अगर हम ज़िंदा रहना चाहते हैं तो हमें हिंसा का समूल अंत करना होगा, वे सारे जीवन इसका ही प्रयोग करते रहे और हमें यह विचार दिया कि हमें युद्ध का सम्पूर्ण अंत करना है।

आज जब दुनिया की सभी आण्विक महाशक्तियां आमने–सामने खड़ी हैं लेकिन अब तक महाविनाश का एक भी मंजर सामने आया नहीं है तो इसके पीछे दो कारण हैं– एक तो जीने की हम सबकी स्वाभाविक लालसा और दूसरा यह कि सामूहिक आत्महत्या के खिलाफ सारे संसार में स्वस्थ इन्कार का भाव ! लेकिन यह कोई अनंत काल तक बनी रहने वाली भूमिका नहीं है। जब तक हम यह न कर सकें कि अपना पर्यावरण स्वयं निर्धारित करने लगें और मनुष्य की चेतना में गहरा बदलाव ला सकें, तब तक हम आण्विक विनाश को टाल नहीं सकेंगे। आज महाविनाश जो रुका–सा हुआ लगता है वह भय के कारण है, आतंक के कारण है और आप इसे लम्बा खींच नहीं सकते हैं। महाशक्तियां इस खतरे को समझ रही हैं और भय का संतुलन

टाल कर, इससे छूटने का कोई रास्ता खोज रही हैं, और इसी वक्त में, इस दौर में गांधीजी का दर्शन, उनका संदेश एक नया ही मतलब अख्तियार कर लेता है और फिर हम पर ज़िम्मेदारी आती है कि हम अपने जीवन में और अपने बाहर के जीवन में इन संदेशों को जीवंत सक्रियता से लागू करने के लिए क्या करते हैं।

जब गांधीजी को यह प्रतीति हुई कि अहिंसा का मतलब सर्वोदय है– सबका आत्म जागरण, यही मतलब उन्होंने हमें समझाया था, तब यह भी कहा कि इसके लिए किसी प्रकार का राजनीतिक प्रभुत्व कायम करने की जरूरत नहीं है। जब उन्होंने इस देश की पीड़ा देखी, पतन देखा और लोभ–लालच से भरा मन देखा तो उन्होंने कहा, 'मुझे इस व्यवस्था से लड़ना ही पड़ेगा, मुझे इससे मुक्ति लेनी ही पड़ेगी,' और ऐसा ही उन्होंने किया भी। उन्होंने कहा, 'एक पराजित व घुटनों के बल बैठा हुआ हिन्दुस्तान न खुद को और न संसार को ही किसी तरह की मदद पहुंचा सकता है। एक स्वतंत्र और जागरूक हिन्दुस्तान ही अपनी भी और संसार की भी खिदमत कर सकता है।' और फिर वे आगे भी कहते हैं, 'मैं अपने देश की स्वतंत्रता इसलिए चाहता हूं कि वह किसी दिन जरूरत पड़ने पर सारी मानवता के लिए अपना बलिदान कर सके। ' यह दिशा थी जो उन्होंने पकड़ी थी, और हमें दिखायी थी।

गांधीजी को इसका अहसास था कि हमारे अपने देश में ऐसा कुछ हो रहा है कि जिसका समर्थन हममें से किसी की अंतरात्मा नहीं करेगी। हम अपने ही भाइयों के साथ ऐसा व्यवहार करते हैं जो मनुष्य के स्वाभिमान को हर तरह से कुचल डालता है। ऐसी चीज़ें चलती हैं हमारे समाज में जिसकी बड़ी कीमत हम अदा कर रहे हैं। इसलिए वे छुआछूत को अभिशाप मानते हैं और कहते हैं के 'जब तक यह किसी भी हिन्दू के हृदय के किसी कोने में भी पड़ा है तब तक मैं हिन्दू होने से शर्मिंदा होऊंगा।' इसी तरह वे कहते हैं 'जब मुट्ठी भर लोगों की मुट्ठी में लाखों लोगों की किस्मत कैद रहेगी तब तक हमारा अस्तित्व कृत्रिम, अप्राकृतिक तथा असभ्यतापूर्ण माना जाएगा और हमें इन सबसे छूटने का लगातार प्रयत्न करते रहना होगा।' इसलिए सामाजिक भेदभाव खत्म होने चाहिए, आर्थिक गैर–बराबरी का अंत होना चाहिए। यह सब था जिनके लिए वे देश के भीतर लड़े और पूर्णत: अहिंसा के आधार पर लड़े, अहिंसा का मतलब सबका सर्वत्र जागरण और सबका कल्याण, जिसे वे सर्वोदय कहते थे। वे अपना पूरा जीवन इसके लिए समर्पित कर सके क्योंकि वे हर समय खुद से संघर्षरत रहते थे। वे अत्यंत विनयशील थे। दूसरों से श्रेष्ठ होने का उनका कोई दावा नहीं था, न वे खुद को गलतियों से परे मानते थे। वे दूसरों की राय अत्यंत धैर्य से सुनते थे और उन पर कभी क्रोधित नहीं होते थे। यह वह धैर्य था जो आज की दुनिया को जीत सकता है। हम आज अपनी सभ्यता के शिखर पर तो नहीं ही हैं, कहीं मध्य में भी नहीं हैं। मानव सभ्यता के इतिहास का सवेरा अभी फूट ही रहा है। अभी बहुत दूर जाना है और इस लम्बे सफर में यदि हम उनके सिद्धांतों की थाती को ईमानदारी से, गंभीरता से और विचारपूर्वक संभाल कर चलते हैं तो हम आज से बेहतर दुनिया बना सकते हैं।

गांधीजी कहते हैं कि देशभक्ति अपने आप में कोई आखिरी चीज नहीं है। इसकी मर्यादा है। 'मैं अपने देश की सेवा इस तरह नहीं करूंगा कि उससे जर्मनी या इंग्लैंड के हित को चोट पहुंचे।' इस तरह की संकीर्णता, इस तरह की स्वार्थी देशभक्ति एक सभ्य इंसान के लिए काम्य नहीं हो सकती है। उन्होंने हमें अपना दर्शन दिया, उन्होंने अपनी उत्कटता हमें सौंपी और अपनी वह अभिव्यक्ति हमें दी जिससे हम अपनी ही गरिमा के प्रति सचेत रहें, अपने सम्मान का बोध हमें हो। उन्होंने हमें यह अहसास भी कराया कि हम मानव कहलाने लायक ही नहीं हैं यदि हम अमानवीय ताकतों में भरोसा रखते हैं। कारण भले कुछ भी हो कि हम अत्यंत दरिद्रावस्था में रहे हैं कि घोर विपन्नता से घिरे हैं हम कि हमारे राष्ट्रीय सम्मान पर चोट पड़ती रही है लेकिन ये सब यदि हमें खींच कर हिंसा के रास्ते ले जाते हैं तब हम गलत हैं, गलत रास्ते जा लगे हैं। यदि हम उनके सिद्धांतों के पालन में खुद को समर्थ न पाते हों तो भी हमें उन सिद्धांतों की सार्थकता और उनकी सर्वोच्च सामयिकता तो स्वीकार करनी ही चाहिए।

गांधीजी का संदेश वैश्विक है वे उन अवतारी पुरुषों की श्रेणी में आते हैं जिनके शब्दों को उनकी पीढ़ी ने भले न स्वीकार किया हो लेकर भविष्य की पीढ़ी उनका अनुगमन करेगी।❑

(शताब्दी वर्ष के आयोजन का उद्घाटन भाषण)

नवनीत, दिसम्बर, २०१८ से साभार



प्रौढ़ साक्षरता कार्यक्रम एवं संबद्ध संस्थानों की शवयात्रा



तुहीन देब

देश में साक्षरता और प्रौढ़ शिक्षा का कार्यक्रम पिछले ४० वर्षों से चल रहा था। इसे अचानक बंद कर दिया गया है। बिना किसी कारण के। बिना किसी सूचना के। इससे साक्षरता अभियान को जबरदस्त धक्का लगा है। करीब साढ़े तीन लाख प्रेरक बेरोजगार हो गये हैं। देश भर में ३२ राज्य संसाधन केन्द्र संकट में हैं। जयपुर का राज्य संदर्भ केन्द्र भी इसी संकट को भोग रहा है। राजस्थान के १७००० प्रेरकों की रोजी-रोटी छिन गई है। इन सारी स्थिातियों से उपजी पीड़ा को प्रस्तुत लेख में स्पष्ट कर रहे हैं तुहिन देब। तुहिन देब छत्तीसगढ़ राज्य संसाधन केन्द्र के निदेशक हैं। वर्षों से साक्षरता के काम से जुड़े हुए हैं। ❑ सं.

देश भर में संचालित प्रौढ़ साक्षरता कार्यक्रम जो कि सन २००९ से साक्षर भारत कार्यक्रम के नाम से जाना जाता था को गत ३१ मार्च, २०१८ से भारत सरकार द्वारा बंद कर दिया गया है। साक्षर भारत कार्यक्रम एक प्रमुख व महत्वाकांक्षी कार्यक्रम था जिसके जरिए राष्ट्रीय साक्षरता मिशन, प्रौढ़ शिक्षा तथा साक्षरता की उन्नत गुणवत्ता व स्तरीय कार्यों को परिणति देना चाहती थी ताकि देश में संपूर्ण साक्षरता एवं शिक्षित समाज की निर्मिति संभव हो सके।

भारत में प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम सभी पंचवर्षीय योजनाओं में अलग-अलग नामों से संचालित रहा (१९७८ में राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम एन.ए.ई.पी., शुरू होने तथा मई १९८८ में राष्ट्रीय साक्षरता मिशन की स्थापना के बाद इसके गतिशील होने के साथ)। प्रथम पंचवर्षीय योजना में इसका नाम था 'सामाजिक शिक्षा कार्यक्रम' तथा ११वीं व १२वीं पंचवर्षीय योजना में इसका नाम 'साक्षर भारत कार्यक्रम' था। यद्यपि २०११ की जनगणना के अनुसार देश की साक्षरता दर ७३ फीसदी थी जिसमें पुरुष साक्षरता दर ८०.९ फीसदी तथा महिला साक्षरता ६४.६ फीसदी थी। ७ वर्ष से ऊपर आयु समूह के असाक्षरों की कुल संख्या २८.२७ करोड़ थी (पुरुष १०.२८ करोड़ तथा महिलाएं १७.९९ करोड़) इसी के साथ १५ वर्ष व उसके ऊपर की आयु समूह के असाक्षरों में पुरुष ९.०८ करोड़ तथा महिलाएं १६.६८ करोड़ थे।

अगली जनगणना जो कि २०२१ में होने वाली है। इसमें संभावना यह है कि साक्षरता दर बढ़ने के साथ जनसंख्या में निरक्षरों की संख्या में भी वृद्धि होगी और विभिन्न कारणों से प्राथमिक शालाओं में शाला त्यागी बच्चों की संख्या में भी वृद्धि होगी। वैसे भी हमारे देश में प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रमों को लगातार ठोस रूप से चलाए जाने के बजाय ज्यादातर तदर्थ (एडहॉक) तरीके से चलाया गया। दुनिया के कई देशों की तुलना में हमारे देश में प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम को हाशिए में रखा गया। उसे औपचारिक शिक्षा की तुलना में कम प्राथमिकता दी गयी और बहुत ही कम बजट मिलता रहा। लेकिन वर्तमान सरकार ने तो उसे सुदृढ़ करने की जगह कार्यक्रम को बंद करके ही दम लिया।

संयुक्त राष्ट्र टिकाऊ विकास लक्ष्य २०३० के दस्तावेज में हस्ताक्षर करने वाले देशों में भारत भी एक है। इसके तहत लक्ष्य ४ में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि देशों को चाहिए कि वे सब के लिए पर्याप्त जीवन शिक्षण अवसरों को बढ़ावा दें। समावेशी व समतापूर्ण गुणवत्ता शिक्षा को सुनिश्चित करें। इस लक्ष्य को पूरा करने के लिए न केवल

प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षा को बल्कि प्रौढ़ शिक्षा को भी सुदृढ़ करने की जरूरत है।

ऐसी हालत में जहां प्रौढ़ साक्षरता कार्यक्रम को जोर शोर से चलाये जाने की जरूरत थी वहीं मार्च २०१८ के बाद साक्षर भारत कार्यक्रम की जगह कोई भी दूसरे प्रौढ़ साक्षरता कार्यक्रम की शुरूआत नहीं की गई। मानव संसाधन मंत्री द्वारा गत ८ सितम्बर २०१७ को अंतर्राष्ट्रीय साक्षरता दिवस पर घोषणा की गई थी कि सरकार वर्ष २०२२ तक पूरे भारत को शतप्रतिशत साक्षर कर देगी। देश में अभी २५ करोड़ असाक्षरों में ६५ फीसदी महिलाएं हैं और उनमें से १५-४४ वर्ष आयु समूह के ५२ फीसदी हैं। और १५-२४ वर्ष आयु समूह की महिलाओं की संख्या १२ फीसदी है। अगले ५ वर्षों में देश को शत प्रतिशत पूर्ण साक्षर बनाने की घोषणा के बावजूद केन्द्र सरकार द्वारा इस लक्ष्य को प्राप्त करने की कोई राजनीतिक ईच्छाशक्ति नहीं दिखती या यूं कहें कि मानव विकास सूचकांक के एक महत्वपूर्ण घटक प्रौढ़ साक्षरता या जन साक्षरता को आगे बढ़ाने में उसकी तनिक भी रुचि नहीं है।

अगले ५ वर्षों में देश को शत प्रतिशत पूर्ण साक्षर बनाने की घोषणा के बावजूद केन्द्र सरकार द्वारा इस लक्ष्य को प्राप्त करने की कोई राजनीतिक ईच्छाशक्ति नहीं दिखती या यूं कहें कि मानव विकास सूचकांक के एक महत्वपूर्ण घटक प्रौढ़ साक्षरता या जन साक्षरता को आगे बढ़ाने में उसकी तनिक भी रुचि नहीं है।

सरकार ने प्रतिवर्ष नौकरियां मुहैया कराने का, काले धन को वापस लाने का या हाशिये पर खड़े आम व्यक्ति को अच्छे दिन लाने का जो वादा किया था वो दूर की कौड़ी साबित हो चुका है। देश में आम जन तथा सामाजिक विकास के तानेबाने को हम मानव संसाधन विकास के क्रियाकलापों से आसानी से समझ सकते हैं। भारत देश में जब मानव संसाधन विकास मंत्रालय की स्थापना की गई थी तब उसके पीछे यह उद्देश्य सम्मिलित था कि जब तक मानव को विकास का संसाधन नहीं माना जाएगा तब तक अपेक्षित परिणामों को प्राप्त करना एक दुरूह कार्य रहेगा। मंत्रालय की स्थापना के साथ मानव विकास सूचकांकों में अभिवृद्धि करने के कई प्रयास हुए। वर्तमान सरकार को गठित हुए ५ वर्ष का समय पूरा होने को है, लेकिन मानव विकास से संबद्ध संस्थाओं के प्रति इसका नजरिया अभी पूरी तरह नकारात्मक व उपेक्षापूर्ण है। देश के मानव विकास सूचकांकों में विकास संबंधी प्रमुख क्षेत्र हैं- गरीबी उन्मूलन, साक्षरता, शिक्षा दर में बढ़ोतरी, जेंडर समता व समानता, जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि, कुपोशण तथा प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार। आज प्रधानमंत्री तथा सरकार में पदस्थ मंत्री डिजीटल इंडिया, कैशलेस सोसाईटी तथा हर घर में बैंक खातों की अनिवार्यता जैसे मुद्दों पर जोर देते हैं लेकिन ऐसा कहते समय यह मूल बात भूल जाते हैं कि बुनियादी साक्षरता के लक्ष्य को हासिल किए बिना यह स्वप्न पूर्ण करना असंभव है। सन १९७६ से लेकर विगत वर्ष तक देश में आम व्यक्ति को साक्षरता कौशल प्रदान करने के लिए प्रत्येक राज्य में राज्य संसाधन केंन्द्रों की स्थापना की गई थी। इन राज्य संसाधन केन्द्रों को यह दायित्व दिया गया था कि राज्यों में १५-३५ आयु वर्ग के निरक्षरों को ना सिर्फ साक्षर करने में सहयोग करें अपितु इन्हें कार्यात्मक रूप से समाज की मुख्य धारा में लाने का कार्य भी करें। राज्य संसाधन केन्द्रों ने सरकारी योजनाओं को जमीनी स्तर पर क्रियान्वित कराने में एक महती भूमिका का निर्वहन किया जिसका प्रमाण योजनाओं का लाभ लेने वाले हितग्राहियों की संख्या से ज्ञात किया जा सकता है।

साक्षरता मानव संसाधन विकास का कार्य करती है जिसका प्रतिबिम्बन जनता द्वारा विकास में भागीदारी से होता है। राज्य संसाधन केन्द्रों ने इसका प्रत्यक्ष प्रमाण भी देखा है। भारत सरकार द्वारा चलाई जा रही जन धन योजना, प्रधानमंत्री सुरक्षा बीमा योजना, बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओं अभियान तथा स्वच्छ भारत मिशन में नवसाक्षरों द्वारा बड़ी संख्या में भागीदारी इसका उदाहरण है। यह साक्षरता से उपजी जागरूकता का ही परिणाम था कि लोगों ने इन योजनाओं को उत्साहपूर्वक अपनाया। साक्षर भारत कार्यक्रम के अंतर्गत चल रहे जिलों में सांसद आदर्श ग्राम योजना में भी नवसाक्षरों की

सक्रिय भागीदारी रही और खासतौर पर स्वच्छ भारत मिशन को लेकर इन ग्रामों में उल्लेखनीय कार्य हुआ है।

राज्य संसाधन केन्द्र पिछले ४० वर्षों से शिक्षा और साक्षरता के क्षेत्र में सघन रूप से कार्य करते आ रहे हैं और साक्षरता दर को बढ़ानें में इन केन्द्रों का विशेष योगदान भी रहा है। अपने लम्बे अनुभवों के आधार पर राज्य संसाधन केंन्द्रों ने सरकार की योजनाओं और कार्यक्रमों को जनता की भाषा और बोलियों में सामग्री तैयार करने में विशेषज्ञता हासिल की है। यही कारण है कि केन्द्र सरकार द्वारा चलाई गई जन कल्याण की योजनाओं को जनता में लोकप्रिय करने के लिए राज्य संसाधन केन्द्रों द्वारा तैयार की गई सामग्री की काफी बड़ी भूमिका रही। इसके अलावा राज्य संसाधन केन्द्र, साक्षरता के विषय में दिए जाने वाले प्रशिक्षणों में भी अहम् भूमिका निभाते आए हैं। भविष्य में भी देश को पूर्ण साक्षर बनाने के अभियान में अपने अनुभवों और कौशल का योगदान देने के लिए तत्पर हैं। जहां एक ओर इन सांसद आदर्श ग्राम क्षेत्रों में सांसदों तथा शासकीय विभागों की उदासीनता रही वहीं दूसरी ओर राज्य संसाधन केंन्द्रो के प्रयासों की बदौलत यहां लोगों को विकास की प्रमुख धारा में लाने का कार्य बिना किसी शोर-शराबे के साथ किया गया। जिन राज्य संसाधन केंद्रों की स्थापना ही साक्षरता कार्यों के जमीनी क्रियान्वयन के लिये हुई थी उनको देय अनुदान ३१ मार्च, २०१८ से बंद कर उनसे सौतेला व्यवहार किया जा रहा है। जहां नवसाक्षरों के कौशल विकास के लिए बने जन शिक्षण संस्थानों को कौशल विकास मंत्रालय के तहत शामिल किया गया है। वहीं राज्य संसाधन केन्द्रों के बारे में यह निर्णय लिया गया है कि प्रदेश सरकार चाहे तो साक्षरता कार्यों में इनका सहयोग ले सकती है। इससे अधिक हास्यास्पद बात हो ही नहीं सकती कि जिन संस्थानों का पोषण पूर्ववत केंद्र सरकारें लगभग ३०-४० वर्षों से करते आई हों, जिन संस्थानों का एकमात्र लक्ष्य ही साक्षरता कार्यों से संबद्ध रहा हो उन्हें इस प्रकार कार्य तथा योजना की मुख्य धारा से पृथक करना सरकारी पूर्वाग्रह तथा अदूरदर्शिता का परिचायक है।

प्रौढ़ साक्षरता कार्यक्रम को अकादमिक व तकनीकी संसाधन समर्थन देने के लिए देश भर में जिन ३२ राज्य संसाधन केन्द्रों की स्थापना की गई थी, मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा उनकी समीक्षा करने की बात कहकर मार्च, २०१८ से छलपूर्वक वित्तपोषण बंद कर दिए जाने के कारण केन्द्र के कर्मचारी पूरी तरह निराश व बेरोजगार होकर दर-दर की ठोकरें खानें के लिए मजबूर हो गए हैं। उसी तरह देश के करीब ३५० से अधिक जिलों में साक्षर भारत कार्यक्रम के तहत प्रत्येक पंचायत में एक लोक शिक्षा केन्द्र की स्थापना की गई थी। जिस केन्द्र में प्रौढ़ साक्षरता कार्यक्रम के संचालन के लिए २ प्रेरकों (एक पुरुष, एक महिला) की नियुक्ति की गई थी।

साक्षर भारत कार्यक्रम के बंद होने से पूरे देश में करीब साढ़े तीन लाख प्रेरक बेराजगार हो चुके है। जो सरकार प्रतिवर्ष २ करोड़ रोजगार देने की बात करती है। वर्ष २०१८ में उसकी नीतियों से करीब १ करोड़ १० लाख लोग बेरोजगार हो चुके हैं। जिनमें राज्य संसाधन केन्द्रों के कर्मचारीगण, जिला लोक शिक्षा समिति के तहत कार्यरत जिला व ब्लाक समन्वयकगण व प्रेरकगण शामिल हैं। पिछले १ वर्ष से अपार कष्ट उठा रहे राज्य संसाधन केन्द्र के कर्मचारीगण व प्रेरकों ने लगातार अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए मंत्रियों, विधायकों, सांसदों के साथ साथ मानव संसाधन विकास मंत्री सहित मानव संसाधन विकास मंत्रालय के उच्चाधिकारियों से लगातार गुहार लगाई लेकिन उनकी आवाज नक्कारखानें में तूती की तरह बनकर रह गई। इसी बीच कई प्रेरकों की बदहाल स्थिति में मौत भी हो गई है, जिनमें छत्तीसगढ़ के कसडोल के प्रेरक धनीराम खूंटे शामिल हैं जिन्होनें साक्षर भारत कार्यक्रम बंद होने के बाद गत वर्ष आत्महत्या की थी।

ऐसा लगता है कि सरकार की शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण, महिला बाल कल्याण, गरीबी उन्मूलन जैसे समाज कल्याणकारी कार्यों में तनिक भी रुचि नहीं है। इसीलिए बेरोजगारी भीषण रूप से बढ़ गई है। अब यह नारा लोकप्रिय हो रहा है कि हमें नारे नहीं जॉब चाहिए। ऐसा प्रतीत होता है कि चूंकि जनता के लिए, साक्षरताकर्मियों के लिए अच्छे दिन नहीं आए हैं, यह उपेक्षा चिंताजनक है। ❑

निदेशक, राज्य संसाधन केन्द्र (प्रौढ़ एवं सतत शिक्षा) देशबंधु परिसर, रामसागर पारा, रायपुर-४९२००१ (छत्तीसगढ़)



निदा फ़ाजली की गज़लें

१

नयी-नयी पोशाक बदलकर, मौसम आते-जाते हैं,
फूल कहां जाते हैं जब भी जाते हैं लौट आते हैं।

शायद कुछ दिन और लगेंगे, जख्में-दिल के भरने में,
जो अक्सर याद आते थे वो कभी-कभी याद आते हैं।

चलती-फिरती धूप-छांव से, चहरा बाद में बनता है,
पहले-पहले सभी खयालों से तस्वीर बनाते हैं।

आंखों देखी कहने वाले, पहले भी कम-कम ही थे,
अब तो सब ही सुनी-सुनाई बातों को दोहराते हैं।

इस धरती पर आकर सबका, अपना कुछ खो जाता है,
कुछ रोते हैं, कुछ इस गम से अपनी गजल सजाते हैं। ❑

२

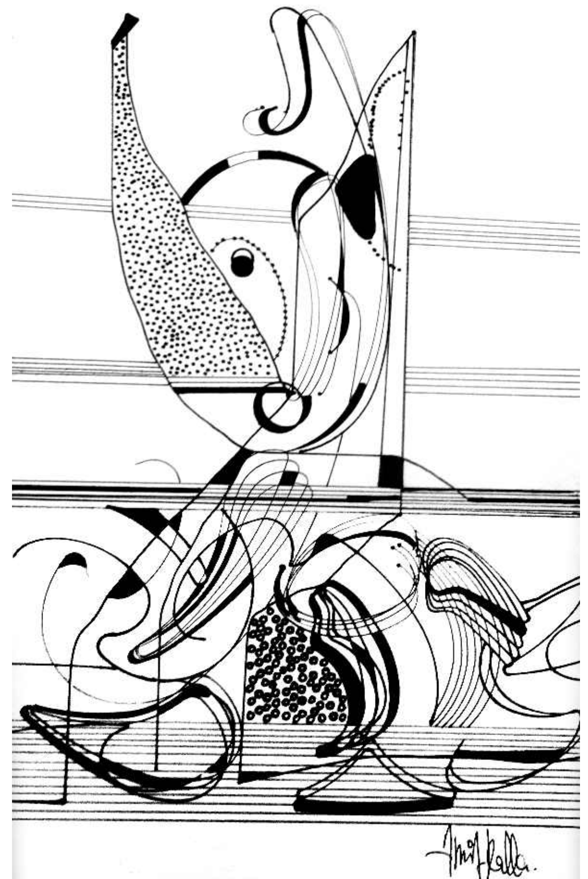
कठ-पुतली है या जीवन है जीते जाओ सोचो मत,
सोच से ही सारी उलझन है जीते जाओ सोचो मत।

लिखा हुआ किरदार कहानी में ही चलता फिरता है,
कभी है दूरी कभी मिलन है, जीते जाओ सोचो मत।

नाच सको तो नाचो जब थक जाओ तो आराम करो
टेढ़ा क्यूं घर का आंगन है, जीते जाओ सोचो मत।

हर मजहब का एक ही कहना जैसा मालिक रक्खे रहना
जब तक सांसों का बंधन है, जीते जाओ सोचो मत।

घूम रहे हैं बाजारों में सरमायों के आतिश-दान
किस भट्टी में कौन ईंधन है जीते जाओ सोसो मत। ❑



३

यकीन चांद पे सूरज में ऐतबार भी रख
मगर निगाह में थोड़ा सा इंतिजार भी रख।

खुदा के हाथ में मत सौंप सारे कामों को
बदलते वक्त पे कुछ अपना इख्तियार भी रख।

ये ही लहू है शहादत ये ही लहू पानी
खिज़ां नसीब सही जेहन में बहार भी रख।

घरों के ताकों में गुल-दस्ते यूं नहीं सजते
जहां है फूल वहीं आस-पास खार भी रख।

पहाड़ गूंजें नदी गाए ये जरूरी है
सफर कहीं का हो दिल में किसी का प्यार भी रख। ❑

४

दुनिया जिसे कहते हैं जादू का खिलौना है
मिल जाये तो मिट्टी है खो जाये तो सोना है

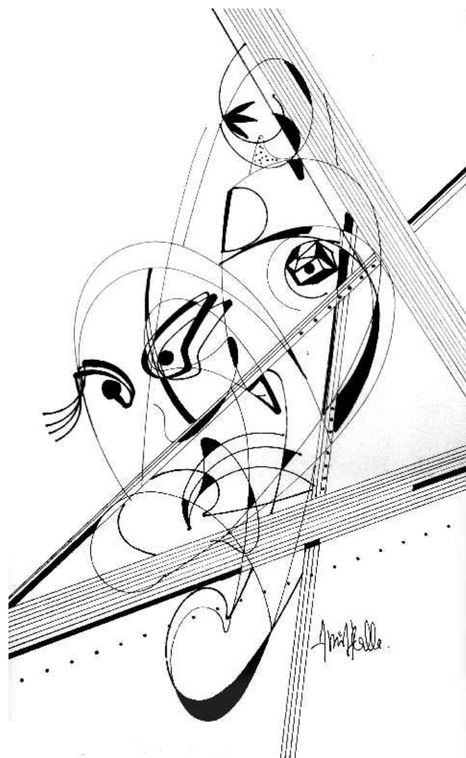
अच्छा-सा कोई मौसम तन्हा-सा कोई आलम
हर वक्त का रोना तो बेकार का रोना है

बरसात का बादल तो दीवाना है क्या जाने
किस राह से बचना है किस छत को भिगोना है

गम हो कि खुशी दोनों कुछ देर के साथी हैं
फिर रस्ता ही रस्ता है हंसना है न रोना है

ये वक्त जो तेरा है, ये वक्त जो मेरा
हर गाम पर पहरा है, फिर भी इसे खोना है

आवारा मिजाजी ने फैला दिया आंगन को
आकाश की चादर है धरती का बिछौना है। ❑



५

मैं रोया परदेस में भीगा मां का प्यार
दुख ने दुख से बात की बिन चिट्ठी बिन तार
छोटा करके देखिये जीवन का विस्तार
आंखों भर आकाश है बाहों भर संसार।

लेके तन के नाप को घूमें बस्ती गांव
हर चादर के घेर से बाहर निकले पांव
सबकी पूजा एक सी अलग-अलग हर रीत
मस्जिद जाये मौलवी कोयल गाये गीत
पूजा घर में मूर्ती मीर के संग श्याम
जिसकी जितनी चाकरी उतने उसके दाम।

सातों दिन भगवान के क्या मंगल क्या पीर
जिस दिन सोए देर तक भूखा रहे फकीर
अच्छी संगत बैठकर संगी बदले रूप
जैसे मिलकर आम से मीठी हो गई धूप।

सपना झरना नींद का जागी आंखें प्यास
पाना खोना खोजना सांसों का इतिहास
चाहे गीता बाचिये या पढ़िये कुरान
मेरा तेरा प्यार ही हर पुस्तक का ज्ञान। ❑



मैं समझ नहीं सकता – बापू



नन्दकिशोर आचार्य

असाधरण प्रतिभा के धनी कवि–विचारक नन्दकिशोर आचार्य चिन्तशील लेखक हैं। जिन्होंने सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन को गंभीरता से जाना हैं । आधुनिक विचार और शिक्षा दर्शन के अलावा गांधी चिन्तन पर लिखी गयी पुस्तकें एवं नाटकों से बौद्धिक जगत पर गहरी छाप छोड़ी है। ऐसी ही रोम–रोम में सिहरन पैदा कर देने वाली गांधी व्यथा की प्रस्तुति यहां प्रकाशित की जा रही है। जब अपना कहने वाले लोग ही जीते जी मौत जैसा दर्द, ऐसा घाव जो आत्मा पर लगे तो कितना नागवार गुजरता है। यह पाठक पढ़कर ही जान सकेंगे। आचार्यजी के नाटक गांधी की यह पहली कड़ी है। दूसरी और अंतिम कड़ी अनौपचारिका के मार्च, २०१९ अंक में प्रकाशित की जायेगी। ❑ सं.

एक झोपड़ी में महात्मा गांधी अकेले बैठे हैं। चारों ओर घना अंधकार है। गांधीजी अपनी एड़ियों की फटी बिवाइयों और तलवों में हो गए घावों को देख रहे हैं और एक जलती मोमबत्ती से बिवाइयों पर मोम टपका रहे हैं।

स्वगत

मनु को बहुत चिंता हो रही है। वह चाहती है, मैं कम से कम चप्पलें तो पहन लूं। इस तरह नंगे पांव चलूंगा तो कंकड़–पत्थर, कील–कांटे, कांच के टुकड़े– ये सब तो चुभेंगे ही। और चुभेंगे तो खून भी बहेगा– बेचारी लड़की भी परेशान होगी ही।

पांवों के ये घाव और फटी बिवाइयां तो सबको दिख जाती हैं– लेकिन वे घाव नहीं दिखते किसी को जो मेरी आत्मा में हो गये हैं। कौन–सी चप्पलें बचा सकती हैं आत्मा को उन घावों से? किसने बिछा दिए हैं ये कील–कांटे और कंकड़–पत्थर मेरी आत्मा की राह में? ये तो मुझे शुरू से मालूम था– जब से इस रास्ते पर कदम बढ़ाए तभी से– कि ये राह आसान नहीं है। लेकिन तब ये कील–कांटे चुभते नहीं थे– सहलाते थे मेरी आत्मा को जैसे–फूल की तरह। क्या इसलिये कि वे मेरी आत्मा का इम्तिहान थे? और मैं उनमें कामयाब होता चला गया। प्रेम और अहिंसा के इम्तिहानों में।

लेकिन आज ये उन्होंने बिछाए हैं जो मेरे अपने हैं– जिनका साथ सुबूत था कि मेरी अहिंसा कामयाब है। आज वे मेरे साथ नहीं हैं और अकेला खड़ा हूं मैं– इस राह पर और ये घाव–मेरी आत्मा के ये घाव– अंग्रेजों के दिये नहीं हैं। उनका दिया हर घाव तो तमगा होता है सच्चाई का, अहिंसा का– मेरी आत्मा और उजली हो जाती है, और निखर आती है–वह खून जो बहता है उन घावों से– मेरी आत्मा को और पवित्र करता जाता है।

पर ये मेरे अपने लोग– मेरे साथी जो मुझे 'बापू' कह कर बुलाते हैं– ये कील–कांटे तो उन्होंने बिछाये हैं– ये घाव तो उनके दिये हैं और विडम्बना यह कि उन्हें दिखते ही नहीं ये और खून जो मेरी आत्मा के इन घावों से बह रहा है। नहीं, शायद मैं गलत कह रहा हूं। शायद मुझे झूठा घमण्ड हो गया है– अपनी अहिंसा की कामयाबी का। कोई गंभीर पाप रह गया होगा मेरी आत्मा में– उसी से बह रहा होगा ये खून।

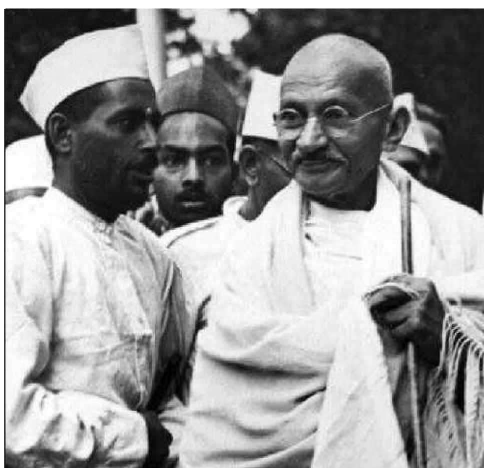
हे ईश्वर, कब निकालोगे मुझे इस घोर अंधकार से? कब नसीब होगी मुझे सच्चाई की रोशनी? होगी भी कि नहीं?

यह क्या हो रहा है मुझे? कहां चली गई मेरी श्रद्धा? क्यों शंका होने लगी है मुझे अपने पर? ईश्वर उद्धारक हो तो रोशनी भी देगा ही। पर तभी तो देगा जब मैं उसे लेने के काबिल बनूं- अपने मन के भ्रमजाल को भेद सकूं। तभी तो देख सकूंगा उस रोशनी को जो इस अंधकार के बाहर इंतजार कर रही है मेरा। है, प्रकाश है- पर भ्रमजाल के अंधेरों के पार। मेरे अपने भ्रमों के अंधकार के पार है वो प्रकाश जो ईश्वर ने मेरे लिए रच रखा है- लेकिन अपने इस भ्रमजाल को तो मुझे ही तोड़ना होगा।

ईश्वर केवल प्रकाश है- हमारी प्रतीक्षा करता हुआ प्रकाश। जिस पल हम अपने भ्रमजाल के अंधेरे को तोड़ने में कामयाब होते हैं, उसी पल वह मिल जाता है। लेकिन क्या मैं अब तक भ्रमजाल में फंसा था- फंसा हूं। किस बात का भ्रम है मुझे? क्या यह भ्रम था कि मेरी अहिंसा कामयाब हुई है?- कि मैं, मेरे सब साथी- जवाहर, सरदार, राजाजी, मौलाना और राजेन्द्र बाबू- ये ही नहीं, सब कांग्रेस जन- वे सब जो मेरे सत्याग्रह में खुशी-खुशी शामिल हुए थे असहयोग और नमक आंदोलन के दिनों में- जिन्होंने बिना किसी भय के, बिना किसी प्रतिकार के, लाठियों-गोलियों के वार सहे थे- जो निहत्थे सर पर लाठी का वार सहते-हाथों से सर को बचाते तक नहीं। और दुनिया देखती रह गई आश्चर्य से हिन्दुस्तान की वह अग्नि-परीक्षा जिसमें सीता की तरह पवित्र होकर निकली थी मेरी-नहीं, केवल मेरी नहीं, हिन्दुस्तान की आत्मा। और मुझे लगा कि लो, सत्य का मेरा यह प्रयोग भी कामयाब हुआ।

मेरा सबसे बड़ा भ्रम यही था शायद। वह एक फौरी कामयाबी थी। अभी शायद और तैयारी की, अभ्यास की जरूरत थी- उस सफलता के स्थायी होने के लिये। दरअसल, हम गुलाम होते हैं हिंसा की ताकत को मान-लेने पर- वो चाहे अपनी हिंसा हो या दूसरों की। नमक आंदोलन ने बता दिया कि हिन्दुस्तान अब आजाद है हिंसा से- यही सोचा था मैंने।

लेकिन मैं गलत था शायद। मुझे लगा कि कांग्रेस ने नमक आंदोलन में अहिंसा को सिद्ध कर लिया है। इसलिये मैंने कहा- अब सत्य और अहिंसा को कांग्रेस स्वीकार कर सकती है- अपने विधान में शामिल कर सकती है उन्हें। कांग्रेस के विधान में था कि 'स्वराज' के लिये 'उचित' और 'शांतिपूर्ण' उपाय किये जायेंगे- मैंने कहा कि 'उचित' और 'शांतिपूर्ण' की जगह अब 'सच्चे' और 'अहिंसक' कर लेना चाहिये। पर उन्होंने नहीं माना। मैं सोच भी नहीं सकता था कि कांग्रेस मेरे इस सुझाव को भी अस्वीकार कर देगी।



उन्हें मेरे उसूलों में कोई श्रद्धा नहीं थी। 'सत्य' और 'अहिंसा' उनके लिये श्रद्धा के नहीं, राजनीति के विषय हैं। मैंने कहा- तब मुझे कांग्रेस का मेम्बर नहीं रहना चाहिये। 'स्वराज' के लिये हम साथ हैं- वे जब चाहें उसके लिये मेरी सलाह, मेरा सहयोग ले सकते हैं। पर मैं उस संगठन का सदस्य नहीं रह सकता जो 'सत्य' और 'अहिंसा' को स्वीकार नहीं करता हो।

इसका मतलब था- उन्हें मेरे उसूलों में कोई श्रद्धा नहीं थी। 'सत्य' और 'अहिंसा' उनके लिये श्रद्धा के नहीं, राजनीति के विषय हैं। मैंने कहा- तब मुझे कांग्रेस का मेम्बर नहीं रहना चाहिये। 'स्वराज' के लिये हम साथ हैं- वे जब चाहें उसके लिये मेरी सलाह, मेरा सहयोग ले सकते हैं। पर मैं उस संगठन का सदस्य नहीं रह सकता जो 'सत्य' और 'अहिंसा' को स्वीकार नहीं करता हो।

और उन्होंने खुशी-खुशी मेरा इस्तीफा मंजूर कर लिया- कांग्रेस से उस मोहनदास गांधी का इस्तीफा जिसे वे सब 'बापू' कहते हैं- जैसे कोई परिवार अपने पिता को बाहर कर दे। पर उन्होंने ऐसा ही किया।

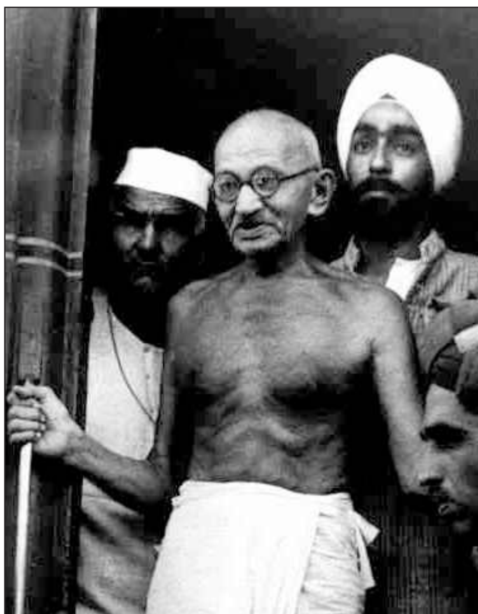
ये शायद पहला घाव था मेरी आत्मा में और वो दिया- अंग्रेजों ने या

लीग ने नहीं– खुद मेरे अपनों ने– उन्होंने जो मुझे –'बापू' कहते थे। मैंने इस्तीफा दिया क्योंकि मैं अपने को उन पर थोपना नहीं चाहता था। पर वे– क्या वे समझते थे कि मैं अपनी अहिंसा उन पर थोप रहा हूं? और 'सत्य'। –क्या सत्य भी थोपा जा सकता है?

लेकिन तब यह नहीं लगा था कि यह घाव है क्योंकि हर किसी को अपना रास्ता चुनने का हक है। मेरे कारण–मेरे दबाव के कारण– कांग्रेस अपना रास्ता क्यों बदले? इसलिए तकलीफ नहीं हुई।

मैं 'स्थितप्रज्ञ' होना चाहता था– जिसका उपदेश गीता करती है। लगा– मैं उसी ओर बढ़ रहा हूं, इसीलिये शायद तकलीफ नहीं है। पर मैं फिर गलत था। वे अहिंसा को न सही, शांति को तो मान रहे थे– पर 'सत्य' को क्यों नहीं? क्या 'सत्य' और 'अहिंसा' अलग हैं? मैं तो कोई फर्क नहीं करता उनमें– एक ही सिक्के के दो पहलू हैं वे। तब वे 'सत्य' को क्यों नहीं मान रहे?

जब मैं यह समझा तब तक शायद बहुत देर हो चुकी थी। उनके लिये राजनीति सत्य पर नहीं टिक सकती थी। शायद यही कारण था कि बहुत सी बातें छुपाने लगे थे– मुझसे ही नहीं, आपस में एक–दूसरे से भी– बल्कि शायद खुद से भी। जब आदमी दूसरे से कुछ छुपाता है तो वो ये नहीं समझ पाता कि वो अपने झूठा होने को खुद से भी छुपा रहा है। इसीलिए मैं कहता रहा हूं–राजनीति में– बल्कि सार्वजनिक जीवन में कुछ भी गोपनीय नहीं होना चाहिये– और सार्वजनिक क्यों निजी जिन्दगी में भी। छुपाना डरना है। डरता वही है जो झूठा है।



मैं 'स्थितप्रज्ञ' होना चाहता था– जिसका उपदेश गीता करती है। लगा– मैं उसी ओर बढ़ रहा हूं, इसीलिये शायद तकलीफ नहीं है। पर मैं फिर गलत था। वे अहिंसा को न सही, शांति को तो मान रहे थे– पर 'सत्य' को क्यों नहीं? क्या 'सत्य' और 'अहिंसा' अलग हैं? मैं तो कोई फर्क नहीं करता उनमें– एक ही सिक्के के दो पहलू हैं वे। तब वे 'सत्य' को क्यों नहीं मान रहे?

इसलिये कांग्रेस जब 'सत्य' को अस्वीकार कर रही थी तो वो एक तरह से झूठ को स्वीकार कर रही थी। ये मैं पूरी तरह तब समझा जब मेरे अजीज दोस्त मौलाना आजाद तक ने मुझसे झूठ बोला। सत्य की अपनी साधना में बरसों से मैं जिस पर भरोसा करता था उस मौलाना आजाद तक ने।

तुम्हें किसी भी मसले पर अपनी निजी राय रखने का हक है मौलाना– और कांग्रेस की– जवाहर तक की– ज्यादातर बातों में मुझसे मुख्तलिफ राय रही है तो उस कांग्रेस के प्रेसीडेंट मौलाना आजाद भी मुझसे अलग राय रख सकते थे। लेकिन अपनी राय को मुझ से और मुझ से ही नहीं कांग्रेस के अपने साथियों से भी छुपा कर ब्रिटिश सरकार और कैबिनेट मिशन को चिट्ठी लिखने की क्या जरूरत आ पड़ी थी? यदि तुम खुद कैबिनेट मिशन के उस फार्मुले से इत्तिफाक रखते थे जिस में मुझे बंटवारे के बीज दिख रहे थे– तो कम–से–कम कांग्रेस के अपने साथियों को तो बताना चाहिये था। पर तुमने किसी को नहीं बताया।

मैं भरोसा नहीं कर सका मौलाना कि तुमने ऐसी कोई चिट्ठी कांग्रेस प्रेसीडेंट की हैसियत से लिख दी है। तब वो चिट्ठी सर क्रिप्स ने मेरे पास भेज दी। चिट्ठी मेरे सामने रखी है और मैं मौलाना तुमसे पूछ रहा हूं कि क्या तुमने ऐसी कोई चिट्ठी कैबिनेट मिशन को लिखी है। पर 'सत्य' को अस्वीकार करने वाली कांग्रेस के प्रेसीडेंट ने साफ झूठ बोल दिया कि उन्होंने ऐसी कोई चिट्ठी नहीं लिखी– और चिट्ठी मेरे सामने है मौलाना। मेरी जबान को जैसे ताला लग गया। मैं सोच भी नहीं

सकता था कि मेरा इतना पुराना साथी मुझसे इतना बड़ा झूठ बोल सकता है।

मानों इतना काफी नहीं था। जब इस बात का जिक्र मैंने अपने साथियों से किया तो जवाहर तुम को भी इस बात की तकलीफ इतनी नहीं थी कि मौलाना को ऐसी चिट्ठी नहीं लिखनी चाहिये थी या उन्होंने मुझसे ऐसा झूठ बोला– गुस्सा था इस बात पर कि मेरे कुछ लोग राष्ट्रीय महत्त्व के मामलों में गड़बड़ी पैदा कर रहे हैं क्योंकि वो चिट्ठी सुधीर घोष मेरे पास लाया था।

साफ है कि मेरे साथियों को 'सत्य' की चिंता कम है। ये सब लोग बहादुर हैं, देशभक्त हैं। आजादी के लिये सबने मुसीबतें, लाठियां और जेलों की तकलीफें सही हैं। लेकिन 'सत्य' के लिए उनमें तड़प क्यों नहीं है? क्या ये मेरी असफलता है? सत्य के बिना क्या कोई आजाद हो सकता है?

लेकिन मैं भी सत्य के लिये उनके जज्बे को उभार नहीं सका। ये सत्याग्रह की मेरी साधना का अधूरापन है। शायद! मैं क्यों समझौता करता गया उनके अधूरेपन से? पर एक सत्याग्रही समझौते से इंकार भी तो नहीं कर सकता। उसे भरोसा रखना होता है– कोई उसका भरोसा बार–बार तोड़े तब भी।

नहीं मौलाना! मैं तुमको छोड़ नहीं सकता– पर तुमने क्यों किया ऐसा? नहीं जानते इस झूठ ने कितनी तकलीफ दी मुझे– अंदर कोई जख्म हो गया जैसे– रिस–रिस कर टपकता रहता है सत्य का खून आत्मा के इस घाव से।

शायद ये मेरी मजबूरी थी– आखिर मुझे इन्हीं लोगों के साथ काम करना था स्वराज के लिये। जो भी लोग उपलब्ध थे इस काम के लिये, उनमें सबसे बेहतर शायद ये लोग ही थे। देशभक्ति और बहादुरी की इनमें कमी नहीं है– जवाहर, सरदार, राजेन्द्र बाबू, मौलाना, राजाजी– और भी बहुत सारे लोग।

लेकिन तब सुभाष बाबू मैं तुमसे क्यों अलग हुआ? देशभक्ति बहादुरी में तो तुम भी कम नहीं थे किसी से? हां, उपायों का अहिंसक बल्कि शांतिपूर्ण होना जरूरी नहीं था तुम्हारे लिये और 'सत्य' की चिंता तुम्हें भी नहीं थी। जर्मनों से रिश्ते बनाने के तुम्हारे गोपनीय तरीकों से मैं सहमत नहीं हो सकता था– हिंसक उपायों के लिये तुम्हारे रुझान से भी।

लेकिन, सुभाष बाबू! आखिर तो अहिंसा की ओर मुड़े तुम। तुम्हारी आजाद हिन्द फौज के ही एक बहादुर सिपाही है कर्नल जीवन सिंह। नोआखाली में आए अपने दल के साथ मेरी मदद के लिये। उन्होंने बताया कि अपने विदाई–संदेश में तुमने उन लोगों से कहा– मेरी अहिंसा के संघर्ष में शामिल हो जाने के लिये। ये सत्य के लिये आग्रह था तुम्हारा जो, दरअसल, उन लोगों में कम दिखायी दिया जो हमारे मतभेद के वक्त मेरे साथ लगते थे।

क्या वे सचमुच मेरे साथ थे? कांग्रेस छोड़ दी सुभाष बाबू तुमने– पर मुझे नहीं छोड़ा शायद– नहीं तो कर्नल जीवन सिंह क्यों आते मेरे पास? पर जिन्होंने कांग्रेस नहीं छोड़ी, वे मुझे छोड़ते गये हैं– एक–एक करके। लेकिन वे मुझे छोड़ रहे हैं या खुद को छुड़वा रहे हैं सत्य और अहिंसा से?

नहीं, पर अहिंसा किसी को पकड़ती नहीं। वह अपने अंदर उगती है और अंदर नहीं उगती तो बाहर की अहिंसा झूठ होती है– एक फरेब जिसका मुलम्मा पहले ही मुकाबले में उतर जाता है– जैसे उतर गया कांग्रेस के मेरे साथियों का जब महायुद्ध में ब्रिटिश सरकार से हमारे सहयोग का मसला सामने आया।

तुम्हें याद होगा सरदार– तुम लोग युद्ध में सरकार का साथ देना चाहते थे– कुछ शर्तों के साथ। लेकिन मैं इसे ठीक नहीं मानता था। अहिंसा की लड़ाई लड़ने वाले शस्त्रों के युद्ध का साथ क्यों दें? तुम लोगों ने मेरी नहीं मानी– पर हुआ वही जिसका मुझे अंदेशा था। अंग्रेजों ने नहीं मानी तुम्हारी कार्यसमिति की बात। तुम्हें याद है सरदार! तब तुमने क्या कहा था? तुमने कहा था कि मेरी राय को न मानना तुम लागों की भूल थी। तुम्हें पश्चाताप था इस भूल पर। तुमने कहा भी था–मुझे याद है वह वाक्य–'हमारे



जीवन-काल में आइन्दा ऐसा कभी नहीं होगा।' मुझे लगा शायद फिर तुम लोग अहिंसा के नजदीक आ रहे हो। शायद तुम लोगों को पश्चाताप हो रहा है सत्य और अहिंसा को छोड़ देने का। पश्चाताप सत्याग्राही की पहचान है। लेकिन नहीं, तुम लोगों को सच्चा पश्चाताप नहीं था। तभी तो वह वादा जल्दी ही भूला दिया गया।

लेकिन मैं भूला नहीं हूं। 'भारत छोड़ो आंदोलन' के लिए भी तुम लोग कहां राजी थे ? मीरा बेन के साथ मैंने अपना प्रस्ताव भेजा था इलाहाबाद- कार्यसमिति की बैठक में। तुम लोगों ने उसे अस्वीकार कर दिया । तुम लोगों को लगता था आंदोलन अंग्रेज सरकार को कमजोर करेगा। युद्धकाल में यह ठीक नहीं है। पर मुझे लगता था, जनता आंदोलन के लिए तैयार है- यही ठीक वक्त है आंदोलन का। हमें लड़ाई में न अंग्रेजों का साथ देना है, न जर्मनी, न जापान का। मैंने तो कहा भी था कि हम जापान का अपनी अहिंसा से मुकाबला कर सकते हैं- हमें अपनी रक्षा के लिए ब्रिटिश फौज की जरूरत नहीं है। पर तुम लोग अहिंसा की ताकत को नहीं पहचानते थे।

आखिर मुझे कहना पड़ा- यदि तुम लोग आंदोलन नहीं चाहते थे तो मैं अपनी निजी हैसियत में जनता का आह्वान करूंगा क्योंकि जनता आंदोलन चाहती है। तब कहीं जाकर तुम लोग तैयार हुए। मेरे कारण नहीं, डर के कारण। जनता पर पकड़ खत्म हो जाती तुम लोगों की-यदि कांग्रेस आंदोलन में साथ नहीं होती। ये बिल्कुल साफ था। जनता में स्वराज के लिए कितनी तड़प थी-इस आंदोलन ने बता दिया। हम सब लोग जेलों में थे और आंदोलन अपने-आप चल रहा था- बिना किसी नेतृत्व के। 'करो या मरो' के मंत्र ने जैसे प्राण फूंक दिया था देश में। मानता हूं, कुछ तोड़फोड़ हुई-वह नहीं होनी चाहिए थी-नहीं होती यदि सब को एक साथ गिरफ्तार नहीं किया गया होता- पर क्या ये कम था कि मानव-हिंसा नहीं हुई-जबकि कोई नेता बाहर नहीं था जो जनता का मार्ग दर्शन करता।



लेकिन तुम लोग फिर भटक गए- खासतौर पर तुम दोनों -हां जवाहर, तुम भी। तुम दोनों ने साथ दिया होता मेरा तो शायद आज नहीं देखना पड़ता ये दिन। मैंने कहा था कैबिनेट मिशन की योजना हमें नहीं माननी चाहिए- देश के बंटवारे के बीज दिख रहे हैं मुझे उसमें। पर तुम दोनों नहीं माने। मेरे खिलाफ जाकर मंजूर किया तुम लोगों ने उसे। मैं जानता हूं मेरे खिलाफ जाने में तकलीफ हुई होगी तुमको। निश्चय ही- मुझे क्या कम तकलीफ हुई-स्थितप्रज्ञ होने का मेरा वहम तो टूट ही रहा था। लेकिन सवाल मेरा नहीं था। सवाल था देश को बचाने का। मुझे लगता था अंग्रेज लीग के चक्कर में हैं और कांग्रेस अब अंग्रेजों के चक्कर में आ रही है। ये एक तरह से लीग के चक्कर में आ जाना था। मैं समझ रहा था पर तुम लोग नहीं समझ पा रहे थे। मुझे सब कुछ उलटा चलता दिख रहा था। झूठ ही झूठ था-चारों तरफ-और तुम लोग भी उसी झूठ के शिकार थे। एक किस्म की आक्रामकता तुम लोगों में भी आ रही थी-अधीरता और आक्रामकता। इसीलिए तो सरदार तुमने लीग की धमकी का जवाब उसी की जबान में दिया-'हम तलवार का जवाब तलवार से देंगे।' क्या ये कहना ठीक था ?

लीग को हिन्दुओं से कोई मतलब नहीं-पर क्या कांग्रेस को भी मुसलमानों से कोई मतलब नहीं ? यही तो चाहती थी लीग कि कांग्रेस को केवल हिन्दुओं की पार्टी साबित कर दे। लीग की भाषा में बोलना लीग से हार जाना है। पर तुम लोग ये नहीं समझ रहे थे और ये मेरी नाकामयाबी थी कि मैं तुम्हें समझा नहीं पा रहा था।

तुम भी तो बार-बार यही पूछते हो जवाहर-'कितने लोग आपके कड़े नियम का पालन करने के लिए तैयार हैं ?' मैं कहता हूं - 'यह तो और भी बड़ा कारण है कि हमें इस रास्ते पर चलना चाहिए।'

मुझे लगता है कि मैं अपने रास्ते पर अकेला रह गया हूं। अकेले चलने में तकलीफ नहीं है- तकलीफ ये है कि जिन्दगी भर के मेरे हमराही न केवल मुझे छोड़ कर चल दिए- वे मुझे गलत, सनकी या शायद ऐसा बेवकूफ तक समझने लगे हैं जो वास्तविकता को नहीं समझ सकता।

इसलिए चाहे वो खत अकेले मौलाना ने लिखा हो- और तुम लोगों से सलाह किए बिना, बताए बिना लिखा हो- पर कैबिनेट मिशन की योजना को मानकर कांग्रेस ने आखिर मौलाना को ही तो सही साबित किया। तुम लोगों को लगता था इससे हम बंटवारे से बच जाएंगे- मुझे लगता है इससे हम बंटवारे में फंस जाएंगे। सम्प्रदायों की बिना पर प्रान्तों के ग्रुप बनाना क्या बंटवारे के तर्क को मान लेना नहीं है?

लेकिन मेरी किसी ने नहीं सुनी। तुम मुझे छोड़ चुके हो- पर मेरी मजबूरी है कि मैं तुम्हें नहीं छोड़ सकता। हो सकता है तुम लोगों से मुझे मोह हो गया है- शायद- क्योंकि स्थितप्रज्ञा अभी तक मुझे हासिल नहीं हुई है। लेकिन सिर्फ इतना ही नहीं। इस वक्त मेरा तुम लोगों को छोड़ने का मतलब देश को अकेला छोड़ देना है क्योंकि नेतृत्व तुम लोगों के हाथ में है। शायद ये सर्वोत्तम नेतृत्व नहीं है, पर इससे बेहतर अभी उपलब्ध भी नहीं। इतिहास इस नेतृत्व की कमजोरियां जब जानेगा तब जानेगा-मैं तो अभी ही जान रहा हूं। पर और कोई चारा भी तो नहीं। लेकिन अपने अकेले होते जाने का एहसास खाए जा रहा है मुझे।

नोआखाली के बाद अब मैं बिहार में हूं। चारों ओर दंगों की आग लगी है-कहीं मुसलमान मारे-काटे जा रहे हैं, कहीं हिन्दू। मैं गांव-गांव घूम रहा हूं-हिंसा की इस आग को अपनी आत्मा के जल से बुझाता हुआ। तुम लोग अहिंसा की ताकत को मानते नहीं हो-पर बंगाल की यह हिंसक आग अहिंसा के जल से ही ठंडी की है इस बूढ़े ने- और अब बिहार में भी देख रहे हो। पर इसका भी कोई असर नहीं तुम लोगों पर।

अखबारों से जाना मैंने कि कांग्रेस ने पंजाब के विभाजन का प्रस्ताव किया है। यह क्या है? क्या ये एक तरह से पाकिस्तान की मांग को मान लेना नहीं है? मुझे लगा जैसे मैं आसमान से गिर रहा हूं किसी अथाह गर्त में-गिरता ही जा रहा हूं-कोई आसरा नहीं। जैसे तुम लोगों ने ही नहीं, ईश्वर ने भी मुझे बेसहारे अकेला छोड़ दिया है-मुझे ही नहीं समूचे हिन्दुस्तान को। क्या मैं इतना बेकार हो गया हूं कि तुम लोगों ने मुझ से एक बार सलाह करना भी जरूरी नहीं समझा। शायद तुम लोग जानते थे कि मेरी राय क्या होगी और उसका जवाब तुम लोगों के पास नहीं था।

और जब मैंने तुमसे पूछा जवाहर-और सरदार तुम से भी- कि पंजाब के विभाजन की इस मांग का क्या औचित्य है- जब हम पाकिस्तान की मांग को ही नहीं मानते। तुम लोगों का जवाब है- हम आप को नहीं समझा सकते। शायद कहना तुम ये चाहते हो कि मैं समझ नहीं सकता। ठीक भी है। जो अहिंसा को समझता हो, उसे इस फैसले में हिंसा ही नजर आयेगी। ये प्रस्ताव कांग्रेस की ओर से बंटवारे का स्वीकार है और मेरी मृत्यु। ❑

भाग-२ अगले अंक में प्रकाशित किया जायेगा

स्मृति शेष...

हिन्दी की शिखर-गद्यकार, अन्याय के विरुद्ध सदा एक सशक्त आवाज़ कृष्णा सोबती सुबह नहीं रहीं। हाल में जब उनसे अस्पताल में मिलकर आया, बोली थीं कि आज 'चैस्ट' में दर्द उठा है। हालांकि तब भी देश के हालात पर अपनी व्यथा ज़ाहिर करती रहीं। हम ही उन्हें छोड़कर उठे। कहते हुए कि दर्द ठीक हो जाएगा। आपको सौ साल पूरे करने हैं। उस दशा में भी वे मुस्कुरा दी थीं। जबकि सच्चाई हम सबके कहीं क़रीब ही थी। वे ९४ की थीं पर हज़ार साल जी कर गई हैं। उनका लिखा गवाह है।

–ओम थानवी



कृष्णा सोबती को समिति परिवार की श्रद्धांजलि।



एक शिक्षक की डायरी



शिवरतन थानवी

स्वाध्याय के हिमायती रहे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् शिवरतन थानवी सारा जीवन प्रयोगशील सत्य पर यकीन करते रहे। उनकी एक बड़ी चिन्ता यह थी कि आज के राजनेताओं के साथ–साथ जब सर्वधर्म और प्रेम में विश्वास रखने वाले धर्मगुरु भी शिक्षा के संबंध में विवेकहीन सवाल खड़े करते हैं तो शिक्षा का आदर्श भाव ही समाप्त हो जाता है। शिक्षा कभी आदर्शरहित हो ही नहीं सकती। लेखक की पुस्तक 'जग दर्शन का मेला' के प्रस्तुत अंश में चिन्ता की झलक स्पष्ट दिखाई देती है। ❑ सं.

श्री श्री रविशंकर ने जयपुर के एक '**आदर्श**' स्कूल में मुख्य अतिथि के तौर पर बोलते हुए कहा कि सभी सरकारी स्कूल बन्द कर उन्हें निजी हाथों में सौंप देना चाहिए। उनकी समझ में सरकारी स्कूल में पढ़े बच्चे नक्सलवाद और हिंसा के मार्ग पर चले जाते हैं। उनमें आदर्श की कमी होती है। आदर्श स्कूल होंगे तो बच्चे उद्दंड नहीं होंगे, नक्सलवाद नहीं फैलेगा। जब चारों ओर बवाल मचा और भर्त्सना हुई, तो श्री श्री ने कह दिया कि उन्होंने तो कभी ऐसा कहा ही नहीं। पैंतरा बदलने की चाल तो राजनेता चला करते हैं, साधु–सन्त भी ऐसा करने लगे ?

भारतीय समाज के बारे में उनकी जानकारी निश्चित ही अधकचरी है। सदी के उत्तरार्ध में उद्योग–धंधे बढ़े तो नव–धनाढ्यों को रिझाने में प्रवीण नए साधु–महात्मा भी पैदा हो गए। साम्प्रदायिकता, घृणा और हिंसा में वृद्धि करने वाले साधु–संत आए तो कुछ ऐसे भी आए जो विद्वान थे, सहज–सौम्य थे और अपने भक्तों को सच्चाई, प्रेम और समाज की भलाई सिखाते थे। श्री श्री रविशंकर को भी हम उन्हीं में मानते थे। झुकाव उनका दक्षिणपंथी है, तब भी सर्वधर्म समभाव और उनके संगीत–प्रधान आयोजनों के कारण वे प्रिय लगते थे। लेकिन अभी जयपुर में उन्होंने जो विचार रखे, उन्हें देखकर हम भौचक्के रह गए।

क्या कोई शिक्षित व्यक्ति सपने में भी ऐसा सोच सकता है ? क्या वे भूल गए कि शिक्षा भी कभी आदर्शरहित होती है ? सरकारी हो या गैर–सरकार, खराब या कच्ची–से–कच्ची, शिक्षा कभी बिना आदर्श के हो ही नहीं सकती। 'आदर्श' का नाम लेकर भले कोई उन्हें विधर्मी या विरोधी से घृणा या हिंसा करना सिखा दे या कुफ्र करने वाले का कत्ल करना ही सिखा दे, सरकारी स्कूलों में ऐसा 'आदर्श' नहीं सिखाया जाता है। वहां वैज्ञानिक दृष्टि और विवेक पर बल दिया जाता है। सहमति–असहमति दोनों की आजादी होती है। प्रतिपक्ष में भी रहना–सहना सिखाया जाता है। क्या यह बुरा है ?❑



आरटीआई कैसे आई!

जन संघर्ष की सफलता की कहानी कहने वाली किताब का राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति में २९ दिसम्बर २०१८ को लोकार्पण कार्यक्रम आयोजित हुआ।

राजस्थान के एक सामान्य से कस्बे ब्यावर से एक ऐसे जन आंदोलन की शुरुआत हुई जो कुछ स्थानीय ग्रामीणों का साथ बना और फिर बढ़ता ही चला गया। सरकार से सूचना के अधिकार का कानून बनवाने में सफल रहे इस आंदोलन की दुनिया भर में अकादमिक और अन्य क्षेत्रों में चर्चा होती है। शासन को जवाबदेह बनाने के लिए नागरिकों को जानने का अधिकार दिलाने के लिए हुए जन संघर्ष की यात्रा की कहानी सामजिक कार्यकर्ता अरुणा रॉय ने विस्तार से अपनी किताब 'द आरटीआई स्टोरी' में प्रस्तुत की तो सभी तरफ से यह आग्रह आया कि यह अंग्रेजी किताब हिंदी में भी आनी चाहिए। हिंदी में प्रस्तुत 'आरटीआई कैसे आई' किताब का समिति में एक गरिमामय समारोह में बड़े ही प्रेम के साथ लोकार्पण किया गया। इस अवसर पर आरटीआई आंदोलन के साथ सक्रिय रूप से जुड़े लोगों, नगर के प्रमुख विचारकों तथा साहित्यकारों के अलावा बड़ी संख्या में युवा छात्र-छात्राएं मौजूद थे।

जन आंदोलन की प्रणेता और पुस्तक की लेखिका अरुणा रॉय और उनके साथ कंधे से कंधा मिला कर चले ग्रामीण कार्यकर्ता शंकरसिंह, सुशीला देवी, नौरती बाई जैसे लोगों ने इस अवसर पर मेहमानों के साथ आंदोलन के अनुभव साझा किए।

अरुणा रॉय का कहना था कि जानने के अधिकार की मांग का आंदोलन किसी एक का आंदोलन नहीं रहा, सभी मिल कर चले और सफलता की मंज़िल तक पहुंचे। यह आंदोलन इसलिए सर्वत्र फैला और उसने सफलता पाई क्योंकि ये बड़ा मजेदार आंदोलन रहा। उनका कहना था कि हम ने यह आंदोलन दुखी हो कर नहीं चलाया। हम ने तय किया कि हम यह आंदोलन मस्ती से करेंगे। सामने वाले को सतायेंगे, खुद दुखी नहीं होंगे...हम कोई राजनैतिक सपना नहीं दे रहे थे।

आगे क्या? इस सवाल के जवाब में उनका कहना था कि अब हमें दूसरे आन्दोलनों के साथ जुड़ना होगा। इस लड़ाई से जो अधिकार हासिल किया गया है उसे बचाये रखने के लिए हमें फिर सड़कों पर जाना होगा। उनकी इस बात की सभागार में मौजूद सभी संभागियों ने ताईद की।

प्रख्यात गांधीवादी चिंतक और लब्धप्रतिष्ठ साहित्यकार नंदकिशोर आचार्य ने अपने अध्यक्षीय सम्बोधन में कहा कि व्यक्ति को अपनी मनुष्यता और उसकी अस्मिता को ज़िंदा रखना है तो उसे ऐसा करने के लिए किन-किन संकटों का सामना करना पड़ता है उसे यह पुस्तक सिखाती है। यह किताब केवल आरटीआई का इतिहास ही नहीं प्रस्तुत करती बल्कि लैंगिक समानता का मुद्दा भी प्रस्तुत करती है। जानने के अधिकार को जनता का हक़ बताते हुए आचार्य ने कहा कि लोगों से टैक्स के रूप में एकत्र की जाने वाली राशि का सरकार कैसे उपयोग करती है यह जानने का हक़ देश के प्रत्येक नागरिक को है। महात्मा गांधी के सत्याग्रह के नैतिक बल की चर्चा करते हुए आचार्य का कहना था कि जानने का अधिकार राज्य को सत्याग्रही बनाने की तरफ एक बड़ा कदम है।



सूचना के अधिकार की कहानी कहने वाली किताब का लोकार्पण राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति में नहीं होगा तो और कहां होगा, यह कहते हुए राजेंद्र बोड़ा ने परिचयात्मक उद्बोधन में कहा शिक्षा के वृहद परिपेक्ष्य में हम इस किताब को देखते हैं। इस किताब में एक जन आंदोलन का बीज बोये जाने से लेकर उसकी सफल परिणति तक की यात्रा का ब्यौरा मिलता है। कोई जन आंदोलन कैसे बनता है या बनाया जा सकता है यह जानना हम लोगों के लिए आज भी उतना ही प्रासंगिक है जितना ७० के दशक में समिति के शुरूआती दिनों में था। कोई जन आंदोलन कैसे बनता है, उसके लिए उर्वरा भूमि पहले से होती है या वह ज़मीन तैयार करनी पड़ती है? उस तैयारी की क्या शर्तें हो सकती हैं? क्या जन आंदोलन किसी सकारात्मक मुद्दे पर हो सकता है या किसी विचार, व्यवस्था, व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के विरुद्ध होना उसके लिये आवश्यक है? किसी जन आंदोलन के लिए कोई खलनायक या विलेन, जो लोक को उसके जायज हक़ से वंचित करता है, जरूरी होता है? इन सवालों के जवाब हम इस किताब को पढ़ते ही खोजते हैं।



समिति के सचिव अरविन्द ओझा ने प्रारम्भ में अतिथियों का स्वागत किया। संगठन सचिव दिनेश पुरोहित ने कार्यक्रम का संचालन किया तथा धन्यवाद ज्ञापित किया।

समारोह में वे गीत भी फिर से गाये गए जो आरटीआई आंदोलन के दौरान गूंजे थे और जिनसे संघर्षरत कार्यकर्ताओं का हौसला बुलंद रहता था। ❑

प्रो. हसन की किताब का लोकार्पण

भूगोलवेत्ता प्रो. मोहम्मद हसन सोशल एक्टिविस्ट के रूप में जाने-जाते है, अब गहरी संवेदनाओं वाले कवि के रूप में हमारे सामने आये हैं। उनकी कविताओं के संकलन की किताब 'Sediments of Silence' (सेडीमेंट्स ऑफ साइलेंस) का लोकार्पण रविवार २० जनवरी को राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति में न्यायमूर्ति विनोद शंकर दवे ने किया।

समिति सभागार में साहित्य, कला, शिक्षा, पत्रकारिता के अलावा मानवीय सरोकार रखने वाली शहर की प्रमुख शख़्शियतें मौजूद थीं। समारोह की अध्यक्षता जयपुर फुट को दुनिया भर में पहुंचाने के काम में लगे पद्मभूषण डी. आर. मेहता ने की।

लेखकीय वक्तव्य में प्रो. हसन का कहना था कि वे तो इंसीडेंटल पोइट हैं न कि पोइटिक मेन और वे अपने को लेखक भी नहीं मानते।

किताब की विवेचना करते हुए जाने माने समालोचक नरेंद्र शर्मा 'कुसुम' का कहना था कि हसन साहिब की कविताएं असामान्य और अपरंपरागत हैं और बड़बोलेपन से मुक्त हैं। कवि में सच कहने का अद्वितीय साहस है।

इससे पहले हरिदेव जोशी पत्रकारिता विश्वविद्यालय के पूर्व उपकुलपति और पत्रकार सनी सेबेस्टियन ने बताया कि किताब में संकलित कविताएं २५ वर्षों के कालखंड में लिखी गई हैं। हालांकि इसमें ८२ कविताएं सम्मिलित की गई हैं मगर इतनी रचनाएं रह गई हैं कि उनसे एक और पुस्तक बन जाये।

इस अवसर पर हसन साहब के कुछ मित्रों ने पुस्तक में शामिल कविताओं का पाठ भी किया। ❑



डेन्मार्क के आनंदी बालक

❑

बंशीधरजी

डेन्मार्क कोई बहुत बड़ा देश नहीं है। इसकी आबादी लगभग ३६ लाख है। लेकिन बालकों की दृष्टि से डेन्मार्क बहुत आगे बढ़ा हआ है, बालकों के लालन-पालन और विकास पर वहां खास तौर पर ध्यान दिया जाता है। यही कारण है कि डेन्मार्क में जाने वाला कोई भी यात्री वहां के बच्चों से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। वहां के बालक सबसे पहले उसका ध्यान अपनी ओर खींचते हैं। उनके रहन-सहन, व्यवहार आदि को देखकर वह दंग रह जाता है, वह मन ही मन सोचने लगता है-'ऐसे आनंदी बालक तो आज तक मैंने और कहीं नहीं देखे। ये कितने मिलनसार हैं, कितने हंसमुख हैं, कितने निस्संकोच हैं, कितने प्रसन्न हैं, कितने मस्त हैं ? इन्हें देखकर, इनसे बातचीत करके कितनी खुशी होती है, कितना आनंद आता है, रंज-गम काफूर हो जाता है। सचमुच डेन्मार्क धन्य है जिसने ऐसे आनंदी बालकों को जन्म दिया है।'

रंग बिरंगी पोशाक पहनकर, नंगे सिर, नंगे पांव, उछलते-कूदते, हंसते-हंसाते, जब वहां के बालक शाला जाते हैं, तो वह मनोहर दृश्य देखते ही बनता है, उनके फूल से खिले चेहरों को देखकर मन प्रफुल्लित हो उठता है। मुर्दा दिलों में जीवन का संचार होने लगता है और दुःख दर्द दुम दबाकर भाग जाते हैं। डेन्मार्क के बालक धूल मिट्टी से दूर खुली हवा में रहते हैं। इसलिए उनका शरीर भी स्वस्थ रहता है और मन भी। वे बड़े सरल और सीधे-सादे होते हैं। बनावट और दिखावे से वे कोसों दूर भागते हैं। बाहरी टीप-टाप को वे पसंद नहीं करते। प्रदर्शन उन्हें अच्छा नहीं लगता। माता-पिता भी बालकों का प्रदर्शन नहीं करते। किसी मेहमान के आने पर खिलौनों की तरह उन्हें सजाया नहीं जाता और न ही जबरदस्ती उनसे गाना आदि गवाया जाता है। अतिथियों से बालक बिना संकोच और शर्म के मिलते हैं, उनसे घुलमिल जाते हैं, उनकी बड़ी खातिर करते हैं। उनकी सुविधा और आराम का बड़ा खयाल रखते हैं। उन्हीं की भाषा में बोलने का प्रयत्न करते हैं। विदेशी भाषा में बालक इस ढंग से बोलते हैं कि सुनने वाला दांतों तले अंगुली दबाने लगता है। वास्तव में वहां के बालकों की स्वाभाविकता और निर्दोषता देखने लायक है। किसी को खुश करने के लिये वे कोई काम नहीं करते, जो कुछ करते हैं कर्तव्य समझकर करते हैं।

वहां के बच्चे बड़े प्रेम से रहते हैं। लड़के लड़कियों में लड़ाई, झगड़ा नहीं होता और एक दूसरे की मदद करने के लिये वे हर वक्त तैयार रहते हैं। कोई किसी से घृणा या द्वेष नहीं करता। वहां के बालक किसी को गाली नहीं देते, अपशब्द कहकर किसी का दिल नहीं दुखाते। हमारे देश के बच्चों की तरह शिकायत का तांता लगाकर वहां के बच्चे माता-पिता या शिक्षक की नाक में दम नहीं करते। अपने छोटे-मोटे झगड़े खुद ही निपटा लेते हैं। बड़ों के पास शिकायत





लेकर नहीं जाते। वहां के बच्चे सफाई और स्वच्छता का भी खूब ध्यान रखते हैं। अपने कपड़े और पुस्तकों को साफ-सुथरा रखते हैं। अपनी चीजों को संभालकर यथा स्थान रखते हैं। दिल लगाकर पढ़ते हैं और खूब खेलते हैं। काम से कभी जी नहीं चुराते। हंसते-हंसते अपना सब काम कर लेते हैं। काम करने में उन्हें बड़ा मजा आता है। सुस्ती और लापरवाही उनके पास तक नहीं फटकती।

डेन्मार्क के लगभग सभी लोग पढ़े लिखे हैं। हमारे देश की तरह वहां के लोग अनपढ़ नहीं हैं। प्राथमिक शिक्षा सब के लिये अनिवार्य है। पढ़े-लिखे होने के कारण वहां माता-पिता अपने बच्चों में बड़ी दिलचस्पी रखते हैं। बालकों के प्रति अपने कर्तव्य और जिम्मेदारी को वे खूब समझते है। बच्चों को अपने साथ घुमाने ले जाते हैं। प्राकृतिक व पर्वतीय रमणीक स्थानों की सैर कराते हैं। उनके विचित्र प्रकार के सवालों का जवाब देने में आनाकानी नहीं करते। उनके विकास के साधन जुटाते हैं। उनकी आवश्यकताओं और इच्छाओं को पूरा करने का प्रयत्न करते हैं। डरा-धमका कर उनकी आंतरिक भावनाओं और वृत्तियों का दमन नहीं करते। शिक्षित होने के कारण जन्म से लगाकर सात वर्ष तक के बालकों की शिक्षा की जिम्मेदारी माता-पिता पर ही है। माता-पिता इस जिम्मेदारी को बड़ी अच्छी तरह और ईमानदारी से निभाते हैं। निस्संदेह छोटे बच्चों की शिक्षा माता पिता के हाथ में ही होनी चाहिए। वही बच्चों को सच्ची शिक्षा और ट्रेनिंग दे सकते हैं। चौबीसों घंटे बालक माता-पिता के पास रहते हैं। इसलिये माता-पिता ही उनके सच्चे शिक्षक हो सकते हैं। एक न एक दिन सभी देशों के माता-पिताओं को यह जिम्मेदारी अपने ऊपर लेनी होगी। इसके बिना बालकों का सर्वतोमुखी विकास कभी भी नहीं हो सकेगा। ❑

– शिक्षण पत्रिका अंक-अगस्त, १९४६

दारू नहीं, दूध से करें नववर्ष की शुरूआत

राजस्थान में नए साल का अनोखा और सराहनीय नवाचार 'शराब से नहीं दूध से करें नव वर्ष की शुरूआत' लगातार लोकप्रिय होता जा रहा है। इस साल जयपुर में सौ से अधिक स्थानों पर जनसहयोग से सड़क, मोहल्लों पर स्टॉल लगाकर मुफ्त दूध का वितरण कर इस अभियान में पहले से भी अधिक उत्साह का प्रदर्शन किया गया। इस बार तो मंदिरों एवं धार्मिक स्थलों में भी 'शराब जहर है और शराब नहीं दूध से करें नव वर्ष की शुरूआत के होर्डिंग के साथ दूध का वितरण देखा गया। यहां तक कि जयपुर के हर बाजार, हर मोहल्ले में



शराब संस्कृति की जगह इस सांस्कृतिक आंदोलन का असर देखा गया।

'केयर इंडियन अस्थमा सोसाइटी के अध्यक्ष धर्मवीर कटेवा ने बताया कि नव वर्ष के अवसर पर दूध पिलाकर युवाओं को बुराइयों को त्यागने का संकल्प कराया जाता है। अब यह मुहिम गांवों तक में पहुंचने लगी है। ❑

आवरण पृष्ठ-२ से आगे...



घेरे में बिठाकर पुस्तकें बीच में फैला दी गयीं। अधिकांशत: सभी ने अपनी रुचि की पुस्तकों को उठाया । पन्ने पलट कर देखा और बीच-बीच में से पढ़ा भी। नारों की किताब बहुत पसन्द की गई। महिलाओं ने कुछ नारे भी लगाए। वित्तीय साक्षरता व कानूनी साक्षरता की पुस्तकें एवं फोल्डर महिलाओं को पढ़ने के लिए दिए। उन्हें जब यह बताया गया कि कानूनी साक्षरता की किताबों में महिलाओं संबंधी कानून दिए गए हैं तो वे इन कानूनों के बारे में जानने को उत्सुक हो गई। इन कानूनों की संक्षिप्त जानकारी उन्हें दी गई।

समिति की मुख्य गतिविधि प्रशिक्षण है। इसके संबंध में भी महिलाओं को बताया। साक्षरता संबंधी प्रशिक्षणों के अतिरिक्त समिति में वित्तीय साक्षरता, कानूनी साक्षरता, चुनावी साक्षरता व स्वयं सहायता समूह के प्रशिक्षण विभिन्न स्तरों के प्रशिक्षकों के लिए आयोजित किए जाते हैं। समिति द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका अनौपचारिका के संबंध में भी उन्हें बताया।

महिलाओं ने संवाद के दौरान स्वयं सहायता समूह निर्माण के बारे में बताया। समूह में पैसों का लेन देन कैसे करते हैं? ऋण के लिए क्या नियम हैं? बैंक में खाता कैसे खोला जाता है? अलग-अलग समूह की महिलाओं ने समूह से जुड़ाव व प्रक्रिया के संबंध में बताया। प्रत्येक माह बैठक आयोजित की जाती है। जहां सभी मिलते हैं। वहीं समूह में तय मासिक किश्त जमा करते हैं। आवश्यकता अनुरूप ऋण लेते देते है। ऋण के उपयोग के संबंध में महिलाओं ने बताया कि सिलाई, बुनाई, झाड़ू बनाने के कार्य के लिए ऋण लिया है। ऋण की राशि लौटा कर पुन: उन्होंने बताया कि शुरू में परिवार की ओर से किसी-किसी महिला को कठिनाई आयी थी किन्तु धीरे-धीरे परिवार को विश्वास हो गया। अब तो पति स्वयं समूह की किश्त जमा कराने के पैसे देते हैं।

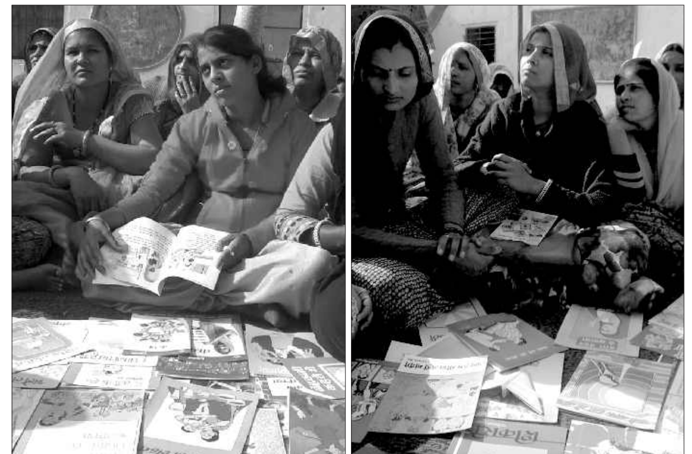
गांव में उपलब्ध सुविधाओं के बारे में भी चर्चा की गई। ग्राम पंचायत द्वारा आयोजित महिला सभा में भागीदारी के संबंध में महिलाओं ने बताया कि २० जनवरी, २०१६ को पहली महिला सभा ग्राम पंचायत में आयोजित की जाएगी। उस सभा में हम सब भाग लेंगे। महिलाओं ने कहा कि अभी तक गांव की समस्या के समाधान पर बैठक में कभी बात नहीं की। स्वयं के स्तर पर क्या समाधान हो सकते हैं यह भी नहीं सोचा। विचार करेंगे तो समाधान भी मिलेंगे।

संवाद से यह तो स्पष्ट हो गया कि महिलाओं को स्वयं सहायता समूह गठन एवं संचालन संबंधी जानकारी है। वित्तीय समायोजन, वित्तीय प्रबन्धन तथा उद्यमिता विकास संबंधी प्रशिक्षणों की उन्हें विशेष आवश्यकता है। जिससे कि ऋण का सदुपयोग हो सके। कोई व्यवसाय करें तो उससे निश्चित लाभ प्राप्त कर सकें। मांग के अनुरूप कार्य कर सकें आदि।

शिक्षा संबंधी चर्चा के दौरान जाना कि स्वयं सहायता समूह में अधिकतर महिलाओं को अक्षर ज्ञान नहीं है, कुछ अर्द्धसाक्षर हैं। जब हमने पढ़ने पढ़ाने की बात की तो सभी महिलाओं ने उत्साहित होकर कहा कि हम अवश्य ही पढ़ना चाहती हैं। उनकी पढ़ने की इच्छा है। समूह की शिक्षित महिलाओं ने आगे बढ़कर कहा कि वे गांव की अन्य असाक्षर महिलाओं को भी पढ़ाने का कार्य कर सकती हैं। साक्षरता शिक्षण प्रशिक्षण के लिए महिलाएं सहमत हो गईं। समिति में प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए जरूर आना चाहेंगी। प्रशिक्षण से पूर्व असाक्षर महिलाओं को चिह्नित करने की भी बात कही ताकि प्रशिक्षण के तुरन्त पश्चात साक्षरता शिक्षण प्रारंभ किया जा सके।

इस साक्षरता संवाद में समिति की ओर से दिनेश पुरोहित, रचना सिद्धा और मैं बटीना मलिक ने भाग लिया। महिलाओं के साथ यह संवाद कार्यक्रम बहुत ही सार्थक रहा। अन्त में हम सबने मिलकर गीत गाया- **हम होंगे कामयाब एक दिन।** ❑

-बटीना मलिक



समिति प्रकाशन



गरीब नवाज

हमारे देश में कई ऐसे सूफी संत हुए हैं जिन्होंने मानवता को अपना धर्म माना और जिनके सामने अमीर- गरीब, हिंदू-मुसलमान, राजा-रंक सब एक समान ही थे। उन्होंने जात-पात, ऊंच-नीच और छुआछूत का भेद नहीं किया। ऐसे ही एक सूफी हुए ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती जिनकी मजार अजमेर में है और इसी कारण इसका नाम अजमेर शरीफ हुआ।

ईरान देश में एक किसान परिवार में १८ अप्रेल, ११४२ ईसवी में पैदा हुए मोइनुद्दीन किस तरह ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती के नाम से प्रसिद्ध हो गए उसकी पूरी कहानी इस किताब में है। कहते हैं ख्वाजा साहब ने मदीना में हज के दौरान सपने में अजमेर शहर को देखा था तभी उन्होंने इसे अपनी कर्मस्थली बनाने का निश्चय कर लिया था। माता-पिता के देहांत के बाद जब मोइनुद्दीन अपना सारा सामान बेचकर घर से निकले तब रास्ते में उन्होंने अपना सारा पैसा गरीब, परेशान, दुखी और मोहताज लोगों में बांट दिया था। उन्हें तब पता भी नहीं था कि उन्हें जाना कहां है। समरकन्द, बुखारा, मदीना, नेशापुर होते हुए वे बगदाद पहुंचे। यहां उन्होंने ख्वाजा उस्मान हारूनी को अपना गुरु बनाया। बीस वर्षों तक वे अपने गुरु के साथ रहे।

बाद में लाहौर और दिल्ली होते हुए वे राजस्थान आए अपने सपने में देखे अजमेर शहर को अपना ठिकाना बना लिया। अजमेर में रहते हुए वे सभी धरमों के लोगों को एकता, प्रेम और भाईचारे का पाठ पढ़ाने लगे। उनके विचारों की चर्चा दूर-दूर तक होने लगी। दूर-दूर से लोग उनके पास आने लगे। उनकी चौखट पर आकर लोग एक खास किस्म की शांति महसूस करते थे। इसीलिए लोग उन्हें आदर से गरीब नवाज कहने लगे। इन्सानियत को अपना धरम मानने वाले गरीब नवाज मानवता की सेवा को ही सबसे बड़ी भक्ति मानते थे। उनकी शांति, एकता, दया और सहानुभूति आदि से भरे विचारों की पूरी दुनिया में कद्र होने लगी और इस सूफी संत को पूरे विश्व में जाना जाने लगा।

अजमेर शहर को ख्वाजा साहब के नाम से दुनिया भर में जाना जाने लगा। ख्वाजा की दरगाह अजमेर नगर का आभूषण है। अजमेर आने वाला कोई व्यक्ति बिना ख्वाजा साहब की दरगाह पर गए वापस नहीं लौटता है। राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति ने ख्वाजा साहब के पूरे जीवन चरित को इस पुस्तक के माध्यम से पाठकों के सामने रखने की कोशिश की है। सोलह पृष्ठों की यह पुस्तक भाषा और कथानक की दृष्टि से बहुत ही सहज और सरल है। पुस्तक में छायाचित्र और रेखाचित्र दोनों का प्रयोग किया गया है। पुस्तक कथ्य के प्रति रोचकता बनाए रखती है और अंत तक पाठकों को बांधे रखती है। ❑

पुस्तक– गरीब नवाज
लेखक– कन्हैया अगनानी
कीमत– पांच रुपये पचास पैसे
प्रकाशक–राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति, जयपुर

निवेदन

- **समिति के प्रकाशन, पाठक पत्र लिखकर मंगवा सकते हैं। आपके घर तक पहुंचाने का डाक शुल्क समिति द्वारा वहन किया जायेगा।**
- **पाठक प्रकाशन की राशि समिति के बैंक खाते में सीधे जमा करा सकते हैं। बैंक विवरण निम्न है –**

BANK OF BARODA
Rajasthan Adult Education Association
Branch Name : IDS Ext. Jhalana Jaipur
I.F.S.C. Code : BARB0EXTNEH (Fifth Character is zero)
Micr Code : 302012030
Acct.No. : 98150100002077